* श्री *

आयुर्वेद।

आयुर्वेदकी उत्पत्ति कैसे हुई, कब हुई, और आयुर्वेदके पढ़नेसे क्या लाभ है? इन प्रश्नोंके उत्तर देनेके पूर्व्व, हमें यह बतलाना आवश्यक है कि, "आयुर्वेद" किसे कहते हैं, क्योंकि आयुर्वेदके पढ़नेवाला जब तक "आयुर्वेद"का अर्थ न समझेगा, तब तक उसका मन "आयुर्वेद"की ओर हरगिज़ न झुकेगा, उस ओर उसकी रुचि कदापि न होगी।

ऋषियोंने लिखा है,—"शरीर, इन्द्रिय, मन और आत्माके संयोग या मेलको "आयु" अर्थात् उम्र कहते हैं, और जिस शास्त्र से आयुका ज्ञान और उसकी-प्राप्ति होती है, उसे "आयुर्वेद" कहते हैं।" चरक मुनिने लिखा है:—

> हिताहितसुखंदुःखमायुस्तस्य हिताहितम्।
> मानञ्च तञ्च यत्रोक्तमायुर्वेदः स उच्यते॥

जिससे आयुके हिताहितका ज्ञान और उसका परिणाम मालूम हो, उसे "आयुर्वेद" कहते हैं। और भी लिखा है:—

आयुर्हिताहितं व्याधि निदानं शमनं तथा।
विद्यते यत्र विद्वद्भिः स चायुर्वेद उच्यते॥

जिसमें आयुका हित, अहित, रोगका निदान और शमन हो— उसको विद्वान् "आयुर्वेद" कहते हैं।

इस जगत्में ऐसा कोई विरलाही प्राणी होगा, जो दीर्घायु न चाहता होगा। जीवनका ऐसा मोह है, कि घोर कष्टोंमें फँसा हुआ प्राणी, यद्यपि असह्य शारीरिक और मानसिक क्लेशोंके मारे ज़बानसे तो मृत्युको आवाहन करता रहता है, किन्तु जब मृत्यु सामने दिखलाई देती है, तब और भी कुछ दिन जीते रहनेकी आकांक्षा प्रकट करता है। इससे सिद्ध होता है कि, प्रत्येक प्राणी जो इस जगत्में आया है, जल्दी ही यहाँसे विदा होना नहीं चाहता। जब यही बात है, तब मनुष्य-मात्रको थोड़ी या बहुत वह विद्या अवश्य सीखनी चाहिये, जिससे रोगोंके निदानकारण और उनकी शान्तिके उपाय मालूम हों। रोग होनेका क्या कारण है, कौन रोग है, इस रोगका नाश कैसे होगा, किन बातोंसे आयुकी वृद्धि और किनसे क्षय होता है, मनुष्य किस तरह अकाल मृत्युसे बच सकता है और किस तरह परमायुकी प्राप्ति हो सकती है—ऐसी-ऐसी बातें "आयुर्वेद" में विस्तारसे लिखी हैं; इसलिये प्रत्येक मनुष्यको, जो अपना या पराया भला चाहता है, संसारमें कोई बड़ा काम करनेका अभिलाषी है, आयुर्वेद-विद्या अवश्य दिल लगाकर पढ़नी, समझनी और सीखनी चाहिये।

आयुर्वेदकी उत्पत्ति ।

आज इस भूतलपर जितने देश हैं, सभीका आयुर्वेद अलग-अलग है; परन्तु सब देशोंके आयुर्वेदोंकी उत्पत्ति हमारे आयुर्वेदसे ही हुई है । हमारा आयुर्वेद सबसे पहला और आदि है, इसको सप्रमाण हम आगे लिखेंगे । पहले हम यह बतलाते हैं कि, हमारे आयुर्वेदका जन्म कैसे और कब हुआ, हमारे यहाँ कौन बड़े-बड़े आयुर्वेदके जानने और लिखनेवाले विद्वान् हुए, उन्होंने कौन-कौनसे ग्रन्थ लिखे, उनमेंसे कौन-कौनसे ग्रन्थ उच्च श्रेणीके और कौन-कौनसे निम्न श्रेणीके हैं ।

आयुर्वेदकी उत्पत्तिका यथार्थ समय निश्चित करना, हमारे लिये तो सर्वथा असम्भव ही है । अनेक विद्वानोंने इस विषयमें दिमाग़ लड़ाया और अब भी लड़ा रहे हैं, परन्तु सच्ची कामयाबी आज तक किसीको न हुई, आजतक कोई भी मंज़िल मक़सूद तक न पहुँचा, सभी इधर-उधर लटकते रह गये । कोई कुछ कहता है और कोई कुछ, सबका मत भी एक नहीं ।

यद्यपि थोड़ी बहुत अङ्गरेजी हमने भी पढ़ी है, आजकलके विद्वानों की रायोंपर विचार भी किया है, तो भी उनकी दलीलें हमारे कमज़ोर दिमाग़में नहीं घुसतीं; हमारे ख़यालात उसी पुराने ढर्रेके हैं, जिनकी कि आजकलके बाबू या मिस्टर दिल्लगी उड़ाया करते हैं । यद्यपि हम आयुर्वेदके जन्मकी सन् और तारीख़ नहीं दे सकते, पर यह दावेके साथ कह सकते हैं, कि हमारा आयुर्वेद संसारमें सबसे पुराना और पहला है । सुनते हैं, वेदोंमें इसका जिक्र है, इसलिये यह वेदोंके ज़माने का है । वेद यदि अनन्तकाल या लाखों-करोड़ों वर्षोंसे हैं, तो "आयु-

वेद" भी लाखों-करोड़ों वर्षोंसे है; यदि आजकलके विद्वानोंके मतानुसार वेद चार छै हज़ार वर्षोंसे हैं, तो यह भी चार छै हज़ार वर्षोंसे है। यदि हम, थोड़ी देरके लिये, वेदोंको चार छै हज़ार वर्षोंका भी मानलें, तो भी हमारे इस कथनमें, आयुर्वेद सबसे पुराना और पहला है, कोई दोष नहीं आता; इसकी प्राचीनतामें बट्टा नहीं लगता। माफ़ कीजिये, हमें क्या कहना था और क्या कहने लग गये। आयुर्वेदकी उत्पत्तिकी बात लिखते-लिखते, जोशमें आकर, उसकी प्राचीनताका राग अलापने लग गये। अच्छा, पहले उत्पत्तिकी बात ही सुनिये।

किसी ज़मानेमें 'आयुर्वेद' का सार-सर्वस्व लेकर ब्रह्मदेवने अपने नामसे एक ग्रन्थ रचा और उसका नाम रक्खा "ब्रह्मसंहिता"। उस ग्रन्थमें एक लाख श्लोक थे, पर आजकल वह कहीं नहीं मिलता।

अपनी पुस्तक रचनेके बाद ब्रह्मदेवने, संसारके उपकारके लिये, दक्ष प्रजापतिको आयुर्वेद पढ़ाया। दक्ष प्रजापतिने दोनों अश्विनीकुमारोंको आयुर्वेदकी शिक्षा दी। उन दोनों भाइयोंने इस विद्यामें बड़ी भारी उन्नति की और खूब नाम कमाया। उनकी अद्भुत चिकित्सा-प्रणाली पर देवराज इन्द्र दिलोजानसे मोहित हो गये। उन्होंने स्वयं यह विद्या अश्विनीकुमारोंसे सीखी। सुरपुरीमें ये दोनों भाई ही देवताओंका इलाज करते थे।

महर्षि आत्रेयने राजा इन्द्रसे आयुर्वेद सीखा। उन्होंने अग्निवेश, भेड़, जातूकर्ण, पराशर, क्षीरपाणि और हारीतको आयुर्वेदकी शिक्षा दी। इन्होंने आयुर्वेदमें पारदर्शिता प्राप्त करके, अपने-अपने नामसे अलग-अलग ग्रन्थ लिखे।

अग्निवेश हारीत आदि ऋषियोंके ग्रन्थोंका सारमर्म लेकर और अपनी ओरसे कुछ घटा बढ़ाकर चरक आचार्य्यने अपने नामसे एक ग्रन्थ रचा। इसी ग्रन्थका नाम आजकल "चरक" के नामसे संसारमें प्रसिद्ध है।

"चरक" की संसारमें बड़ी प्रतिष्ठा है। कहते हैं, "चरक" पढ़े बिना जो चिकित्सा करता है, वह वैद्य नहीं यमदूत है। पाश्चात्य विद्वानोंने भी लिखा है, यदि संसार में "चरक" की रीति से चिकित्सा की जाय, तो संसार आजकल की तरह रोग-पीड़ित न हो। हमारे यहाँ वाले भी चिकित्सा के लिये "चरक" की बड़ी तारीफ करते हैं। कहा हैः—

निदाने माधवः श्रेष्ठः सूत्रस्थाने तु वाग्भटः।
शारीरे सुश्रुतः प्रोक्तः चरकस्तु चिकित्सिते॥

रोगों का निदान-कारण जानने के लिये "माधव निदान" सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ है; सूत्रों के लिये "वाग्भट्ट" सर्वोत्तम है; शारीरिक ज्ञान के लिये "सुश्रुत" और चिकित्सा के लिये "चरक" सबसे उत्तम है।

चरक में गद्य (Prose) और पद्य (Verse) दोनों हैं। यह बड़ा कठिन ग्रन्थ है, इसी से साधारण वैद्य इसे नहीं पढ़ते; पर ऊपर कह आये हैं, कि "चरक" बिना अच्छी चिकित्सा नहीं आती, इसलिये वैद्यकका व्यवसाय करनेवाले को "चरक" अवश्य पढ़ना चाहिये। यह ग्रन्थ सूत्रस्थान, विमानस्थान प्रभृति आठ भागोंमें विभक्त है। सूत्रस्थान में हज़ारों काम की बातें, संक्षेपमें, बड़ी ही खूबीसे लिखी गई हैं। इस भाग के पढ़ने से वैद्य को काम की हजारों बातें मालूम हो जाती हैं। विमानस्थानमें रसायन अर्थात् फिजियोलॉजी और केमिष्ट्री का संक्षिप्त वर्णन है। इसमें न्यायशास्त्रका अधिक अंश है, इससे मामूली अक़्ल वालोंको यह भाग बुरा मालूम होता है। शरीरस्थानमें शरीरके अङ्गों के वर्णन के सिवाय वेदान्त, सांख्य और वैराग्य का जिक्र बड़ी ही खूबीसे किया गया है। आठवाँ सिद्धि स्थान है। इसमें कुछ सवाल-जवाब बड़े ही कामके हैं। सारांश यह, कि इस ग्रन्थका प्रत्येक भाग बड़ा ही उपयोगी है।

चरक के बाद "सुश्रुत" का नम्बर है। यह महात्मा विश्वामित्र के पुत्र थे। इन्होंने अपने पिता की आज्ञा से, प्राणियों के उपकारार्थ,

एक सौ ऋषिपुत्रों के साथ, काशी जाकर, काशिराज दिवोदास से आयुर्वेद सीखा । कहते हैं, महाराज दिवोदास धन्वन्तरि के अवतार थे । उन्होंने इन्द्रके कहने से इस लोक में जन्म लिया था । काशिराज सभी ऋषिपुत्रोंको आयुर्वेद सिखाते थे, मगर उनके शागिर्दोंमें सुश्रुत सबसे तेज थे । आप गुरुके उपदेशों को खूब ध्यान लगाकर सुनते थे । कहते हैं, इसीसे आपका नाम "सुश्रुत" पड़ गया ।

सुश्रुतने पढ़-लिखकर अपने नाम का जो ग्रन्थ लिखा, उसीको आज कल "सुश्रुत कहते हैं । इस ग्रन्थ में जर्राही या सर्जरी खूब अच्छी तरह लिखी है । सुश्रुतसे अच्छी अस्त्र-चिकित्सा हमारे और किसी ग्रन्थ में नहीं है । इसमें रोगों की संख्या और चिकित्सा भी चरकसे अधिक है । यह ग्रन्थ पांच भाग और एकसौ बीस अध्यायोंमें विभक्त है । इन पाँचोंके सिवा एक "उत्तरतन्त्र" और है । उसमें ६६ अध्याय हैं और उसमें चिकित्सा खूब ही अच्छे ढंग से लिखी है । चरकसे यह ग्रन्थ कम नहीं है, अतः वैद्यों को इसे भी अच्छी तरह पढ़ना चाहिये क्योंकि केवल एक शास्त्र के पढ़ने से कोई वैद्य नहीं बन जाता । यों तो जो एकमें है वही सबमें है, पर बारीक नजरसे देखा जाय, तो जो एकमें है वह दूसरे में नहीं; इसीसे जितने अधिक ग्रन्थ देखे जायं उतना ही अच्छा हो ।

चरक और सुश्रुत के बाद "वाग्भट्ट" का नम्बर है । यह ग्रन्थ भी अव्वल दर्जेका समझा जाता है । चरक, सुश्रुत और वाग्भट्ट—इन तीनों को ही "वृद्धत्रयी" कहते हैं । जो इन तीनों को पढ़ लेते हैं, वह अच्छे वैद्य समझे जाते हैं ।

वाग्भट्ट महोदय महाभारतके जमानेमें थे। कहते हैं, आप महाराज युधिष्ठिरके प्रधान वैद्य थे । किसी-किसीने लिखा है कि, आप ईसा से दो सौ वर्ष पहले हुए थे । खैर, कुछ भी हो, इसमें ज़रा भी संशय नहीं कि, आप अपने समय के नामी वैद्य हुए । आपने चरक और सुश्रुतका

सहारा लेकर जो ग्रन्थ लिखा है, उसका नाम "अष्टाङ्ग हृदय" है; पर वह "वाग्भट्ट" के नामसे अधिक प्रसिद्ध है।

वाग्भट्टके बाद "बङ्गसेन" का नम्बर है। कोई कहता है, आप विक्रमकी ग्यारहवीं शताब्दीमें हुए और कोई कहता है कि, चार-पाँच सौ वर्ष पहले आप बङ्गालमें मौजूद थे। आपने भी—चरक, सुश्रुत और वाग्भट्टके आधारपर—अपने नामसे एक ग्रन्थ लिखा है जो "बङ्गसेन" के नामसे मशहूर है। आपकी चिकित्सा-पद्धति बहुत ही उत्तम है। आपने जो लिखा है, वह बहुत ही सरल रीतिसे लिखा है, और ऐसे अच्छे ढँगसे लिखा है कि, जो विषय दूसरे ग्रन्थोंमें आसानीसे समझमें न आता हो, वह इसमें बड़ी ही आसानीसे समझमें आ जाता है। इसके सिवा, इसमें एक और खूबी है कि जो विषय और ग्रन्थोंमें नहीं हैं, वह भी इसमें मिलते हैं। यह ग्रन्थ भी वैद्योंके पढ़ने-योग्य है।

बङ्गसेनके बाद माधवाचार्य-लिखित "माधव-निदान" का नम्बर है। कहते हैं,—आप ईसाकी बारहवीं सदीमें, विजयनगरके राजा के प्रधान मन्त्री थे। सुप्रसिद्ध सायण आचार्य्य आपके भाई थे। आपने अलग-अलग विषयोंपर अनेक ग्रन्थ लिखे हैं, पर चिकित्सा-शास्त्रके सम्बन्धमें आपका लिखा "माधव निदान" ही सर्वोत्तम है। यद्यपि इसमें आजकलके अनेक रोगोंके निदान नहीं हैं तथापि इस कामके लिये इससे अच्छा ग्रन्थ और नहीं है, इसीसे प्रत्येक वैद्य इसे अवश्य पढ़ता है।

माधवनिदानके बाद "भावप्रकाश" है। इसके लेखक मदरास-प्रान्त के रहनेवाले भावमिश्र महोदय हैं। आपने भी अपने नामसे एक ग्रन्थ लिखा है। उसका नाम ही "भावप्रकाश" है। यद्यपि आपने अपना ग्रन्थ चरक, सुश्रुत आदि के आधार पर लिखा है, तथापि आपने अपनी ओरसे भी खूब काम किया है। पोर्च्यूगीज़ या पुर्त्तगाल-निवासी आपके

समयमें भारतमें आगये थे, इससे आपने फरङ्गिस्थानसे आनेवाले फिरंग प्रभृति रोगोंका भी जिक्र किया है। यह ग्रन्थ भी वैद्योंके पढ़ने-योग्य है।

भावप्रकाश के बाद "शार्ङ्गधर" का नम्बर है। शार्ङ्गधर नाम के किसी आचार्य्यने अपने नाम से यह ग्रन्थ लिखा है। आपने और सब विषय बिल्कुल संक्षेप में लिखकर, रोगों के नाश करनेवाले नुसखे खूब ही अच्छे लिखे हैं। मालूम होता है, आपने अपने आजमाये हुए नुसखे ही इस ग्रन्थमें लिखे हैं; क्योंकि समयपर इस ग्रन्थके नुसखे अक्सर, अकसीर का काम दिखाते हैं।

इन ग्रन्थरत्नोंके सिवा और भी चक्रदत्त, वैद्य-विनोद, वैद्यमनोत्सव भैषज्यरत्नावली प्रभृति अनेक वैद्यक-सम्बन्धी ग्रन्थ हैं; पर भिषक-श्रेष्ठ पण्डितवर लोलिम्बराज महोदयका लिखा "वैद्यजीवन" नामक ग्रन्थ हमें बहुत पसन्द है। अपनी प्रियतमाके प्रश्नोंके उत्तरके मिससे, अनेक रोगोंके अचूक नुसखे कह डाले हैं। आपने भी अपने परीक्षित नुसखे ही कहे हैं, ऐसा मालूम होता है। आपके छोटेसे काव्यके पढ़नेमें बड़ा मजा आता है।

हमने ऊपर जिन-जिन ग्रन्थोंके नाम लिखे हैं, उनको गुरुसे अच्छी तरह पढ़ लेनेपर, मनुष्य "पूर्णवैद्य" हो सकता है। परन्तु जिस तरह आजकलके वकील विकालत पास कर लेनेपर भी, सदा "ला रिपोर्टों" को देखते रहते हैं; उसी तरह वैद्योंको भी अनेक वैद्यों के अनेक ग्रन्थ, जहाँ तक मिल सकें, मँगा-मँगा कर पढ़ने और मनन करने चाहियें।

आयुर्वेदका अतीत और वर्त्तमान।

हमारा आयुर्वेद संसारमें सबसे प्राचीन और पहला है, यह बात हम ऊपर लिख आये हैं, किन्तु ऊपर हमने अपने कथनके सिवा और कोई प्रमाण नहीं दिया, इसीलिये यहाँ हम कुछ पाश्चात्य विद्वानोंके वचन उद्धृत करके, अपने कथनकी पुष्टि करनेमें कोई ऐब नहीं समझते।

प्रोफेसर रायली साहब लिखते हैं,—"हिन्दुओंका आयुर्वेद पुराना है। अरब और यूनानवालोंसे बहुत पहलेका है।"

प्रोफेसर विल्सन महोदय लिखते हैं,—"भारतमें बहुत प्राचीन काल से चिकित्सा, ज्योतिष और दर्शन शास्त्रके पारदर्शी विद्वान् मौजूद हैं।"

पण्डितवर राइट आनरेबिल एलफिन्सटन महोदय लिखते हैं,— "भारतवर्षसे ही यूरोपवालोंने चिकित्सा-विद्या सीखी थी। हिन्दुओंका रसायन शास्त्रका ज्ञान विस्मयजनक है एवं आशा और अनुमानसे अधिक है।"

"अयुल-उल" नामक एक अरबी-ग्रन्थमें लिखा है,—"आठवीं सदीमें, हिन्दुस्तानके पण्डित बग़दादकी राज-सभामें आयुर्वेद और ज्योतिषकी शिक्षा देते थे। सरक, सर्संस और वेदान,—ये तीन चिकित्सा ग्रन्थ हिन्दुस्तानसे अरबमें लाये गये थे।"

अरबसे इन ग्रन्थोंका अनुवाद यूरोपमें गया। सत्रहवीं शताब्दी तक, अरबकी चिकित्सा-प्रणाली यूरोपीय चिकित्साकी मूल थी।

प्राचीन भारतवासी मुर्दोंको चीर-फाड़ कर ज्ञान लाभ करते थे और अस्त्र-चिकित्सा भी करते थे, जिसके लिये वे १२७ प्रकारके अस्त्र व्यवहार करते थे।

डाक्टर रायली ने लिखा है,—"वास्तवमें यह बड़ी ही विस्मयकर बात है कि, उस समयके चिकित्सक मुर्देकी पथरीको काटकर बाहर निकाल लेते थे; यन्त्रों द्वारा पेटसे बच्चेको निकाल सकते थे। भारत-वासियों ने ही सबसे पहले रसायन विद्याकी आलोचना आरम्भ की थी। धातु-द्वारा बनी हुई औषधियोंके सेवनकी व्यवस्था भी चरक-सुश्रुतमें पाई जाती है।"

ईसामसीहसे चार शताब्दी पहिले, यूरोपके दिग्विजयी सिकन्दरकी सेनाकी चिकित्साके लिये हिन्दू वैद्य नियुक्त हुए थे। असाध्य रोगोंके नष्ट करनेके लिये, वह बहुतसे भारतीय वैद्योंको, बड़े मान-सम्मानसे अपने साथ ले गया था।

ईरानके खलीफा हारूँरशीद अपनी चिकित्साके लिये हिन्दू वैद्योंको रखते थे।

प्रसिद्ध हकीम जालीनूस अपनी पुस्तकमें लिखता है—"आयुर्वेद-विद्या "पहले हिन्दुस्तानसे मिश्रमें और मिश्रसे यूनान और अरबमें गई। मेरे उस्ताद हकीम अफलातून ने हिन्दुस्तान जाकर 'कालज्ञानके' ३६ लक्षण और बहुतसे ग्रन्थ पढ़े थे। उनका सारभाग वह एक तख्ती पर लिख कर गलेमें लटकाये रहते थे। उस तख्तीकी विद्याको वह किसी शागिर्दको न सिखाते थे। मरते समय उन्होंने अपनी बीबीसे कहा कि, मेरे मरने पर इस तख्तीको मेरी क़ब्रमें गाड़ देना। उनकी बीबी ने उनके मरने पर वह तख्ती उनके साथ क़ब्रमें गड़वा दी। मुझे इस बातसे बड़ा अचम्भा हुआ। एक रोज़ क़ब्र खोद कर मैंने वह तख्ती निकाल ली। पीछेसे मैंने उस विद्यामें अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। मेरी देखा-देखी अरस्तू और उनके शिष्योंने भी हिन्दुस्तान जाकर चिकित्सा-शास्त्र पढ़ा।"

एक चिकित्सा-शास्त्र ही नहीं और भी अनेक विद्यायें भारत से ही सब देशोंमें पहुँची हैं। गणित-शास्त्र, दशमलव, रेखागणित, त्रिकोणमिति और बीज-गणितका भी सबसे पहिले भारतमें ही आविष्कार हुआ था।

पण्डितवर कोलब्रुक और वेएटनी साहब के मत से भारत में ही ज्योतिष-विद्या की चर्चा सबसे प्रथम हुई। ईसाकी पाँचवीं शताब्दी में आर्यभटने चन्द्र और सूर्यग्रहणका वास्तविक कारण और पृथ्वी का मेरुदण्डपर आवर्त्तन आविष्कार किया था। उन्होंने पृथ्वीकी परिधिका जो निर्णय किया था, उसमें और पाश्चात्य पण्डितों के निर्णय में बहुत ही कम प्रभेद है। पृथ्वी का गोल होना भी प्राचीन भारतने स्थिर कर लिया था।

जर्मन पण्डित सोपनहर साहबने लिखा है,—"ईसामसीहके धर्मका मूल भारतवर्ष ही है। इसीसे ज्ञात होता है, कि सम्भवतः भारतसे ही ईसाई धर्म गृहीत हुआ है।"

फरासीसी-दार्शनिक कुज्जने लिखा है, "भारतके दर्शनमें ऐसा गम्भीर सत्य भरा हुआ है कि, पाश्चात्य पण्डित गम्भीर गवेषणा कर चुकनेपर जिस स्थानपर पहुँचे हैं, वहाँपर प्रत्येक दर्शनके सत्यको देखकर स्तम्भित हुए हैं। उससे आगे बढ़ने की शक्ति उनमें नहीं है। हम लोग भारतके दर्शनके आगे सिर झुकाकर बाधित हैं। हम लोग इस बातको स्वीकार करनेको बाध्य हैं, कि सर्वश्रेष्ठ दर्शन—मानव जातिके शैशव क्षेत्र—पूर्व्वी प्रदेशमें ही सबसे पहिले उत्पन्न हुआ है।"

पण्डितवर मेक्समूलर महोदयने लिखा है,—"भारतका वेदान्त सर्व्वोत्कृष्ट धर्म और सर्व्वोत्कृष्ट दर्शन है।"

संगीतने भी सबसे पहले भारतमें ही जन्म-ग्रहण किया था। भारतके सप्त स्वर फारस होकर अरब में पहुंचे और वहाँसे ग्यारवीं शताब्दीके आरम्भमें यूरोप पहुँचे।

बस, अब और अधिक लिखने की जरूरत नहीं। ऐसे-ऐसे हजारों प्रमाण हैं, जिनसे साबित होता है कि, पृथ्वीतलपर जितने धर्म हैं,

जितनी विद्यायें हैं, उन सबका उद्गम-स्थान भारतवर्ष ही है, इसमें ज़रा भी शक और शुबह नहीं ।

पाठक ! ज़रा विचारिये तो सही, एक दिन वह था कि सिकन्दरे आज़म, अपनी सेना की चिकित्सा के लिये, भारतीय वैद्यों को बड़े सम्मान और आदर के साथ ले गया था, एक दिन वह था कि ईरान के खलीफ़ा हारूँ रशीद अपनी चिकित्साके लिये भारतीय वैद्योंको रखते थे, एकदिन वह था कि अरस्तू और अफलातून जैसे हकीम भारत से आयुर्वेदकी शिक्षा प्राप्त करके जगत्के श्रेष्ठ चिकित्सकोंमें परिगणित हुए थे; और एक दिन आजका है, कि भारतीय चिकित्सा निकम्मी समझी जाती है । कहिये, आयुर्वेदके उस गौरव, आयुर्वेद की उस उन्नति और आजकी अवनतिमें ज़मीन-आसमानका अन्तर है न ? कहाँ वे दिन और कहाँ आज के दिन ! सोचने से अविरल अश्रुधारा बहने लगती है । हम तो मनुष्य हैं, रक्त और मांस से बने हैं; हमारे आँसू न रुकें, इसमें आश्चर्यही क्या ? इस काठकी लेखनीके भी आँसू नहीं रुकते !

हाय ! एक दिन भारतीय चिकित्सा-शास्त्र ने दुनियाँमें सर्व्वोच्च आसन ग्रहण किया था और आज उसे सबसे नीचा आसन भी नहीं मिलता । जो यूरोपियन हमें आज अर्द्ध-सभ्य, जङ्गली और मूर्ख बताते हैं, हमारी चिकित्सा-विद्याकी हँसी उड़ाते हुए उसे निकम्मी बताते हैं, उनके पूर्व्व पुरुष जिस ज़माने में सचमुच के वनमानुष थे, अपने रहने के लिये घर बनाना भी न जानते थे, ज़मीन में जानवरों की तरह भिटे खोदकर रहते थे, उनसे हज़ारों-लाखों वर्ष पहिले, बल्कि उनके भी गुरु सभ्यताभिमानी ग्रीस और रोमके सभ्यता सीखने और होस सँभालने से भी बहुत पहले, भारत में ऐसे-ऐसे वैद्यरत्न हो गये हैं, जिन्होंने मनुष्यों के कटे सिर जोड़ दिये हैं, अन्धोंको सूझता कर दिया है और बूढ़ों को नौजवान पट्ठा बना दिया है । क्या अश्विनीकुमारों द्वारा ब्रह्मा के कटे सिर के जोड़े जाने की बात निरी

कपोल-कल्पना ही है ? क्या इन्द्रका भुजस्तम्भ रोग और चन्द्रमाका क्षय रोग आराम होनेकी बात निरी गप्प ही है ? नहीं, हरगिज़ नहीं; अगर और देशोंकी पुरानी-पुरानी किताबोंकी बातें बिल्कुल मिथ्या हैं, तो हमारे पुराणोंकी बातें भी मिथ्या हो सकती हैं। अगर उनमें लिखी बातें सत्य हैं, तो हमारे यहाँ की बातें भी निस्सन्देह सच हैं। भेद इतना ही है, कि आज भारतका सितारा बुलन्दीपर नहीं है, आज इसके दिन अच्छे नहीं हैं, आज इसकी दशा गिरी हुई है, इसीसे सारी बातें झूठी हैं। पर सत्य कभी छिपाये नहीं छिपता, इसीसे सत्यवादी पक्षपात-शून्य यूरोपीय विद्वानोंने भी आयुर्वेदके गौरवकी बात मुक्तकंठसे स्वीकार की है।

जबतक भारतमें विदेशियोंका पदार्पण नहीं हुआ, तब तक भारतीय चिकित्सा-विद्या दिन-दूनी रात-चौगुनी उन्नति करती रही। उनके आगमनसे ही इसकी अवनतिका सूत्रपात हुआ। जबसे भारतके अन्तिम हिन्दू-सम्राट् दिल्लीश्वर महाराज पृथ्वीराजका पतन हुआ, और मुसल्मान-शासन इस अभागे देशमें जारी हुआ, तभीसे धीरे-धीरे आयुर्वेदकी अवनति आरम्भ हुई, भारतका अमूल्य रत्न, पृथ्वीका गौरव-स्वरूप, हमारा आयुर्वेद-शास्त्र अवनत अवस्थाको प्राप्त होने लगा।

हिन्दू राजाओंके ज़मानेमें आयुर्वेद संसारकी सभी चिकित्सा-विद्याओंकी अपेक्षा श्रेष्ठ और भारत-सन्तानोंकी स्वास्थ्यरक्षाका एक-मात्र अवलम्ब था। भारतीय चिकित्सा भारतीय सन्तानकी मातावत् हितकारिणी थी। हमारे पूर्वज भारतीय चिकित्साके प्रभावसे ही शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य लाभ करके, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष,—इन चारों पदार्थोंकी प्राप्ति करते थे; और आज-कलकी अपेक्षा दीर्घजीवी, बली एवं नीरोग होते थे। प्रथम तो आयुर्वेदकी रीतिपर चलनेसे कोई रोगी होता ही न था; यदि होता भी था, तो वह सहज ही में आरोग्य लाभ करता था और फिर उसे जन्म-भर

उस रोगके दर्शन न होते थे। आजकलकी तरह उस ज़मानेमें रोगियों और डाक्टरोंकी भरमार न थी।

उस ज़मानेमें आजकलकी तरह यहाँ वालोंको किसी भी रोगमें विदेशी चिकित्साका आश्रय न लेना पड़ता था, क्योंकि आयुर्वेद-विद्या पूर्ण थी। गाँव-गाँवमे आयुर्वेदीय पाठशालायें थीं, इसलिये सद्वैद्योंका अभाव न था। यहाँकी जड़ी बूटियोंसे अल्प प्रयास और कम खर्चमें ही रोगी रोगमुक्त हो जाते थे। यहींसे हज़ारों औषधियाँ अरब, ईरान और रूम होकर यूनान और इटलीमें पहुँचती थीं और वहाँसे स्पेन, फ्रान्स, इङ्गलैंड और जर्मनीमें फैल जाती थीं। वहाँसे उनके एवज़में प्रभूत धन भारतमें आता था। उसी ज़मानेमें यह भारत-वसुन्धरा पृथ्वीका स्वर्ग थी।

मुसल्मानी ज़मानेमें मुसल्मान हकीमोंकी क़दर हुई और भारतीय वैद्योंकी बे-क़दरी हुई। उनका मान बढ़ा, इनका मान घटा। जगह-जगह उन्हींकी पूछ होने लगी। अजख़र, अफ्तयून, गावज़ुवाँ, गुलेबन-फ़शा आदिने सोंठ, मिर्च, पीपर आदिके स्थानपर अपना अधिकार जमा लिया। ज़मानेने एकदम पल्टा खाया, और क्या-से-क्या हो गया! राजा-प्रजा सभीकी नज़रोंमें आयुर्वेदीय चिकित्सा हेच जँचने लगी। वैद्योंकी रोज़ी मारी गई, हकीमोंके पौबारे होने लगे। औषधालय उठ गये, उनकी जगह दवाखाने और शफ़ाख़ाने खुल गये। पंसारियों की दवायें मिट्टीकी हाँडियों और टाटकी थैलियोंमें पड़ी-पड़ी सड़ने, गलने और पुरानी होने लगीं। काम न पड़नेसे पंसारी बेचारे उनके नाम तक भूलने लगे। पंसारियोंका रोज़गार अत्तारोंने छीन लिया। जहाँ देखो वहीं तुख्मख़तमी, गुलेनीलोफ़र, गुलेबनफ़शाकी चर्चा होने लगी। इतनेपर भी ख़ैर यह हुई कि, आयुर्वेदपरसे लोगों का विश्वास एक दम ही उठ न गया। उस ज़मानेमें भी सम्राट् कुल-तिलक अकबर जैसे पक्षपातहीन प्रजावत्सल बादशाह आयुर्वेदकी क़दर

करते थे और अपने दरबार में विद्वान् वैद्यों को रखते थे। इसी से आयुर्वेद-विद्या की मृत्यु नहीं हुई, वह जीवित बनी रही। हाँ, उसका वह पूर्व्व गौरव, उसकी वह महत्ता न रही।

मुसल्मानों के अत्याचारी शासनका अन्त होने पर—न्यायप्रिय, प्रजावत्सला ब्रिटिश गवर्नमेण्ट इस देशकी मालिक हुई। ब्रिटिश-शासनमें अङ्गरेज़ों ने हमारे शास्त्रोंका अङ्गरेजी भाषामें उल्था करवाया। इङ्गलैण्ड-निवासियों ने अविश्रान्त परिश्रम और उद्योगसे अच्छे अच्छे रत्न चुन लिये और अपनी चतुराईसे उनका रूपान्तर करके, उन्हें पहलेसे उत्तम बना दिया। यहाँसे ही हज़ारों दवायें विलायत लेजा-लेजाकर उनके सत्त, पौडर, गोली, टिंचर, तेल प्रभृति बना-बनाकर, उनको मनोमुग्ध-कारिणी शीशियों और डिब्बियोंमें बन्द करके, उनके ऊपर रङ्गीन लेबल और विधानपत्र लगा-लगाकर यहाँ भेजने लगे। इसमें शक नहीं, कि उन्होंने यह काम बड़े कठिन परिश्रम और अध्यवसायसे किया; इसलिए वे किसी प्रकारसे दोष-भागी नहीं। यह तो मनुष्यका धर्म ही है। दोष-भागी हम और हमारे पिछली सदीमें होनेवाले पूर्व्व-पुरुष हैं, जो आलसी की तरह हाथ पर हाथ धरे बैठे देखा किये। अब जबकि रोग एक दम असाध्य हो गया, तब आँखें खुली हैं और अब आयुर्वेदकी उन्नति-उन्नति कह कर लोग चिल्लाने लगे हैं। मगर अब चूँकि रोगने घर कर लिया है, इसलिए वह सहजमें जा नहीं सकता।

अब क्या दशा है? सुनिये,—जगह-जगह खैराती अस्पताल खुल गये हैं। मुफ्तमें इलाज होता है; साधारण रोग सहजमें आराम हो जाते हैं। दवाओं के कूटने-पीसने और काढ़े वगैरः के औटाने छानने की दिक्कतें मिट गयी हैं, इसीसे अब सब लोग उधर ही ढल पड़े हैं। अस्त्र-चिकित्सामें डाक्टरोंके हाथ की सफाई देखकर तो यहाँके लोगोंने डाक्टरोंको धन्वन्तरिका बाबा ही समझ लिया है। सबको यह विश्वास होगया है, कि यूरोपीय चिकित्साके मुक़ाबलेमें आयुर्वेदीय चिकित्सा कोई चीज़ नहीं।

जिन्होंने अङ्गरेजी पढ़ी है, जिन्होंने विद्वता-सूचक डिग्रियाँ प्राप्त की हैं, जो वकील, वैरिस्टर और जज प्रभृति हो गये हैं, वे भारतवासी हिन्दू-सन्तान होने पर भी, आयुर्वेद चिकित्साको हिकारतकी नजरसे देखते हैं और यूरोपीय चिकित्साका आदर करते हैं। ज़रा-ज़रासे रोगों में, जिन्हें पहले यहाँ की स्त्रियाँ भी आराम कर लेती थीं, डाक्टरोंको ही बुलाते और उनकी मुट्ठियाँ गर्म करते हैं। यह सब उन्हें स्वीकार है पर वैद्य महाशय की शकल देखना मंजूर नहीं। इन बड़े-बड़ों की देखा-देखी साधारण लोगोंका झुकाव भी उधर ही होगया है। उन्हें भी आयुर्वेदीय चिकित्सा अच्छी नहीं लगती। अब शहरोंके रहनेवाले पन्द्रह आने लोग डाक्टरी इलाज कराते हैं। जो पहले विलायती दवाओंसे कोसों दूर भागते थे, जो प्राणों के कण्ठ में आ जाने पर भी मद्य-मिश्रित दवा खाना पसंद न करते थे, वे भी आजकल शराब मिली हुई दवायें गटागट पीते और चरबी-मिश्रित मरहमोंको शरीर पर लगाते नहीं हिचकते। अब सोडावाटर और लैमनेड बिना तो उनकी रोटी नहीं पचती। ज़रा खाँसी बढ़ी कि, 'काडलिवर आयल' पीना शुरू किया।

नतीजा यह हुआ कि वैद्योंका रोज़गार बिल्कुल मारा गया। जिनके घरोंमें पीढ़ियोंसे चिकित्सा-व्यवसाय होता था, वे भी अब पेट भरनेके लिए खेती, दुकानदारी और नौकरी करके अपना और अपने परिवारका पेट पालने लगे। जुलाहोंने जिस तरह देशी कपड़ेकी पूछ न होने से कपड़ा बिनना छोड़ कर दूसरा धन्धा कर लिया, छीपियों ने छींट रंगना छोड़ दिया; उसी तरह पूछ न होनेसे, ग्राहकोंके न होनेसे, पेट-भराई न होनेसे, वैद्योंने निरुत्साहित होकर अपना पुश्तैनी धन्धा त्याग दिया। जिस धन्धेमें लाभ नहीं होता, जिस रोज़गारसे कुटुम-परिवारका पालन नहीं होता, उसे कोई भी नहीं करता।

जिस ज़मानेमें भारतमें आयुर्वेदकी तूती बोलती थी, यहाँ लाखों पंसारियोंकी दूकानें अव्वल दर्जे की थीं; उनके यहाँ हर तरह

की उत्तमोत्तम औषधियाँ हर समय तैयार मिलती थीं। वे लोग रोज़-रोज़ काम पड़नेसे दवाओंके नाम, रूप और गुण जाननेमें आजकलके अधिकांश वैद्योंसे अच्छे होते थे। वैद्य लोग जिनके यहाँ अच्छी और ताज़ी चीज़ मिलती थीं, उन्हींके यहाँ अपने नुसख़े भेजते थे। जो पंसारी पुरानी और सड़ी-घुनी दवाएँ रखते थे, उनसे वे क़तई सम्पर्क न रखते थ, इसीसे पन्सारियोंका धन्धा मारा जाता था। इस भयके मारे वे सदा आयुर्वेदके नियमानुसार नयी-पुरानी जैसी-जैसी दवायें रखनी चाहिएँ, वैसी-ही-वैसी रखते थे। अब पंसारी वैसा काम नहीं करते। काम न पड़नेसे दवाओंके नाम और रूप गुण आदि भूलते जाते हैं। नयी-पुरानीका तो उन्हें ख़याल ही नहीं। पाँच बरस हो जायँ, चाहे एक युग हो जाय, जब तक हाँड़ी या थैलीमें दवा रहती है बेचते रहते हैं। अनेक बार एकके बदलेमें दूसरी दवा दे देते हैं। प्रथम तो बेचारोंको रोज़मर्रः काममें आनेवाली सोंठ, मिर्च, हल्दी, असगन्ध आदि सौ-पचास दवाओंके सिवा नाम ही याद नहीं। यदि किसीको याद भी होते हैं, तो वह इच्छित औषधिके अभावमें, ग्राहकके मारे जानेके भयसे, दूसरी ही कोई चीज़ सिर चेप देता है, क्योंकि वैद्य महोदयको तो स्वयं दवाकी पहचान नहीं। पहलेके वैद्य चिकित्साके काममें आने वाली प्रत्येक जड़ी-बूटीको भली भाँति पहचानते थे, स्वयं जङ्गलोंमें जाकर ले आते थे; इसलिये पंसारी भी उनसे डरते थे। परन्तु आज-कलके अधिकांश वैद्य पंसारियोंसे भी गये-बीते होते हैं। ये लोग पुस्तकोंसे नुसख़े लिखकर ले जाते हैं और पंसारीसे कहते हैं, भाई ठीक-ठीक दवा देना। पंसारी दो चार बारमें वैद्यजीके औषधि-ज्ञानकी थाह ले लेता है और फिर मनमानी करने लगता है। कहिये, ऐसी दवायें क्या रोगोंको आराम कर सकती हैं? ऐसी-ऐसी बातोंसे ही आयुर्वेद बदनाम हो गया है। जब असल

हथियारकी यह दशा है, तब चिकित्सामें सफलता कैसे हो ? सभी जानते हैं, कि जिसके पास अच्छे-अच्छे हथियार होते हैं, वही शत्रुको युद्धमें परास्त कर सकता है।

आजकलकी वैद्यक-शिक्षा सिवा चंद आयुर्वेद-विद्यालयोंके, बिल्कुल निकम्मी होती है। "अमृत-सागर" या "वैद्य-जीवन" को गुरु से पढ़कर या स्वयं देखकर अनेक वैद्य बन जाते हैं। भला ऐसे वैद्य इस कठिन काममें कैसे सफलता प्राप्त कर सकते हैं ? चिकित्सा करना बड़ी होशियारी और जिम्मेवारीका काम है। वैद्यकी शरणमें आये हुए रोगीका जीवन-मरण वैद्यकी चिकित्सा-चातुरीपर ही निर्भर है। इसलिये पहले जमानेके विद्वान् चिकित्सातत्त्व-मर्म्मज्ञ वैद्य उत्तमोत्तम शिष्योंको इस विद्याकी शिक्षा देते थे। जिन मनुष्योंके स्वभावमें सहृदयता, दयालुता, परोपकारिता न देखते थे, उन्हें अपने पास तक न फटकने देते थे। धर्मभीरु विद्वानोंको अपना शिष्य बनाकर, उनसे अनेक प्रकारकी प्रतिज्ञायें कराकर और स्वयं निष्कपट भावसे विद्या पढ़ानेकी प्रतिज्ञा करके, शिष्योंको आयुर्वेद की शिक्षा देते थे। उन्हें शास्त्रोंको पढ़ाते, व्याख्यान देते, एक-एक विषयको खोल-खोलकर समझाते, उनकी शंकाओंका समाधान करते और औषधियोंकी पहचान करानेके लिये उन्हें अपने साथ जङ्गल-पहाड़ोंमें ले जाते थे। अस्त्र-चिकित्सा सिखाते समय खर-बूजे तरबूज आदि फलोंपर चीर-फाड़ करना सिखाते थे। इस तरह परिश्रम करनेसे जब शिष्य आयुर्वेदमें पारदर्शी हो जाता था, वनौषधियोंके नाम, रूप और गुणके पहचाननेमें परिपक्व हो जाता था, शल्य शालाक्य और काय-चिकित्साके सर्वाङ्ग सीख लेता था, दवाओंका बनाना अच्छी तरह जान जाता था, चिकित्सा-कर्ममें अनु-भवी हो जाता था, हस्तक्रियामें निपुण हो जाता था, तब गुरु महाशय उसकी परीक्षा लेकर, उसे चिकित्सा-कर्ममें हाथ डालनेकी आज्ञा

देते थे। शिष्य भी जब तक पूर्ण पण्डित और अनुभवी न हो जाता था, गुरुका पीछा न छोड़ता था। दाससे भी अधिक गुरु महाशयकी सेवा-टहल और ख़ुशामद करता था। जब चिकित्सा-कर्ममें पूर्ण अभिज्ञता प्राप्त कर लेता था, तब गुरुसे आशीर्वाद लेकर वैद्यका व्यवसाय करता था। कहिये, आजकल वैसे वैद्य-गुरु और शिष्य कहाँ हैं? आजकल पहलेकी तरह कौन आयुर्वेद सीखता है और कौन सिखाता है? यदि पहलेकी पढ़ाईका नमूना कहीं मौजूद है, तो बङ्ग देशमें कुछ अवश्य है। वहाँके लोगोंकी आयुर्वेदपर कुछ श्रद्धा-भक्ति भी है, पर एक बङ्गालसे सारे भारतका पूरा नहीं पड़ सकता। बंग देशमें भी अब वह पुरानी बात नहीं है; दिन-पर-दिन कविराज घटते जाते हैं और मेडीकल हाल और फारमेसियाँ खुलती चली जाती हैं।

यद्यपि अब भी भारतमें भिषक्श्रेष्ठ प्राणदाता सद्वैद्योंका नितांत अभाव नहीं है; तथापि ऐसे पूर्ण वैद्य उँगलियोंपर गिने जाने योग्य ही हैं। ऐसे उत्तम वैद्य, इतने लम्बे-चौड़े भारतमें, ऊँट की दाढ़में जीरेके समान हैं। आजकल अधिकता ढोंगी वैद्यों की है। ऐसे ही वैद्योंने आयुर्वेदको बदनाम कर रक्खा है। आजकल वैद्य-गुण-युक्त वैद्य कम हैं, किन्तु चरकमें लिखे हुए छद्म-चर या ढोंगी वैद्य बहुत हैं। ऐसे ढोंगी वैद्य दो चार तरहके तेल वगैरः बनाना सीखकर, अपने तईं वैद्य कहते हैं। ये लोग गलियोंमें घूमा करते हैं या बाजारोंमें जहाँ-जहाँ मनुष्योंका आवागमन अधिक होता है बैठे रहते हैं; कुछ जिलोंकी या तहसीलकी कचहरियों या छोटे-छोटे कस्बोंकी धर्मशालाओंमें अड्डा जमा लेते हैं। जहाँ किसीको बीमार देखते हैं, ऐसी बातें बनाने लगते हैं, कि कच्ची समझके लोग इनके फन्देमें फँस ही जाते हैं। इनमेंसे अनेक तो अमीरों तक पहुँच जाते हैं। बड़े लोगों तक पहुँचनेके लिये ये लोग बड़ी-बड़ी चालाकियोंसे काम लेते हैं। उनके नौकरोंसे मिल जाते हैं, उन्हींके द्वारा अपनी सिफ़ारिश पहुँचवाते हैं।

अमीरोंको बड़े कीमती-कीमती नुसखे बतलाते हैं और रुपया वसूल करके स्वयं दवा तैयार करनेका ढोंग रचते हैं। जब उनमे रोगी आराम नहीं होता, रोगीका रोग बढ़ने लगता है, रोगी मरण दशाको प्राप्त हो जाता है, वहांसे अपना उल्लू सीधा करके चुपचाप नौ दो ग्यारह हो जाते हैं। ऐसे ढोंगियोंका यदि हम सविस्तर हाल लिखें, तो एक अलग पोथा हो जाय; इसलिए हम इतना इशारा ही काफी समझते हैं।

एक प्रकारके ढोंगी वैद्य और होते हैं; जो इन मामूलियोंसे कुछ अच्छे होते हैं, पर चिकित्साके नितान्त अयोग्य होते हैं। ये अमृतसागर, वैद्य-जीवन, वैद्यविनोद, योग-चिन्तामणि प्रभृति दो चार छोटे-छोटे ग्रन्थोंको इधर-उधरसे देख लेते हैं। वैद्योंकी तरह दो चार खरल, सौ-पचास शीशियाँ और डब्बे-डब्बी तथा अमृतबान आदि रखते हैं। मौक़े-मौक़ेके दो चार श्लोक भी कण्ठ कर रखते हैं। प्रसङ्ग हो या न हो, हर समय उन्हें कहा करते हैं। रोग-परीक्षा इन्हें नहीं आती, मगर डण्डा-सी नाड़ी जरूर पकड़ लेते हैं। नाड़ी-द्वारा रोगका हाल न समझनेपर भी, प्रतिष्ठा-भङ्ग होनेके ख़यालसे, रोगीसे कुछ पूछते नहीं। अगर रोगी कहता है, कि वैद्यजी! मेरे रोगकी हालत तो सुन लीजिये। रोगीके मुँहसे यह सुनते ही आप बिगड़कर फरमाने लगते हैं, पूछने-बतानेकी कोई जरूरत नहीं। हमारे बाबा ऐसे थे, कि रोगीकी नाड़ी-मात्र देखकर रोगीका कितने ही दिनों पहलेका खाया-पीया और बरसों पहले मरण-जीवनकी बात कह देते थे। ऐसे वैद्य ख़ूब पुजते हैं, रोगी और उसके सम्बन्धी इन्हें साक्षात धन्वन्तरि समझने लगते हैं। ऐसे वैद्य महोदय रोगियोंको सीधा यम-सदन पहुँचाते हैं। अगर रोगकी अवस्था खराब देखते हैं, तो ऐसी-ऐसी दवायें तजवीज करते हैं, जिन्हें रोगी मुहैया न कर सके या वह आसानीसे न मिल सकती हों। जब रोग आराम नहीं होता, तब कहने लगते हैं, कि हम क्या करें, जब

हथियार ही नहीं, तब शत्रुका नाश कैसे हो? यदि दैवात्, किसी तरह रोगमें कमी देखते हैं, तो अपनी तारीफ़ोंके पुल बाँधने लगते हैं और ज़मीन-आस्मानको एक कर देते हैं।

अब जब कि हमारे देशके वैद्योंकी यह हालत है, तब हमारे आयुर्वेदकी बदनामी क्यों न हो? देशी-विदेशी उसकी हँसी क्यों न करें? हाय! सदा अवस्था किसीकी यकसाँ नहीं रहती। जिस तरह दिनभरमें सूर्य्यकी कई अवस्थायें हो जाती हैं, वैसे ही सबकी अवस्थायें बदलती रहती हैं। जिसका उत्थान होता है, उसका पतन भी निश्चय ही होता है। एक दिन जो भारत चिकित्सा, ज्योतिष, गणित, दर्शन प्रभृति विद्याओंमें सब देशोंका सिरमौर था; जहाँ धन्वन्तरि, अश्विनीकुमार, चरक, सुश्रुत जैसे भिषक्श्रेष्ठ पैदा हुए थे और जो सारे जगत्का गुरु था—आज उसी भारत और उसकी आयुर्वेद-विद्याकी यह दुर्गति! भगवान् ही जाने, इसके वे दिन कब फिरेंगे?

आयुर्वेदकी उन्नति कैसे हो?

पीछे हम आयुर्वेदकी अतीत और वर्त्तमान दशाका दिग्दर्शन कर आये हैं। उससे पाठकोंने समझ लिया होगा कि, जो भारतीय-चिकित्सा एक दिन आस्मानसे बातें करती थी, आज वही कालके प्रभावसे, भारतवासियोंके अपने दोषसे रसातलको पहुँच गई है। आयुर्वेद-विद्या हमारी बपौती है, वही हमारे काम आयेगी। कहा है कि, "खोटा पैसा और खोटा बेटा बुरे वक्तमें काम आता है।" मतलब यह है कि, अपनी चीज़ ही समयपर काम आती है, इसलिये आगा-पीछा सोचकर, हमें अपनी चिकित्सा-विद्याकी उन्नति करनी चाहिये। अगर हम भारतवासी ही इसके उद्धारके लिये प्रयत्नशील न होंगे, तन-मन और धनसे इसकी उन्नतिके लिये मुस्तैद न होंगे, तो और किसे ग़रज़ पड़ी है जो इसकी उन्नतिकी फ़िक्र करेगा? अगर हम इसी तरह आलस्यमें पड़े रहेंगे, इसकी ओर नजर उठाकर भी न देखेंगे, तो इसकी अवस्था और भी ख़राब हो जायगी। अभी तो ऐसा कुछ नहीं बिगड़ा है। रोग असाध्य नहीं, किन्तु कष्ट-साध्य है; भरपूर चेष्टा करनेसे हालत के सुधर जानेकी सम्भावना है इसलिये हमें कटिबद्ध होकर, इसकी उन्नतिके उपाय खोज निकालने और करने चाहियें।

हमारी छोटी-सी अक्लमें, इसकी उन्नतिके, निम्नलिखित चंद उपाय अच्छे जँचते हैं:—

(१) विलायती दवाओंसे परहेज़ किया जाय और स्वदेशी दवाओंसे प्रेम ।

(२) जगह-जगह आयुर्वेद-विद्यालय खोले जायँ ।

(३) चिकित्सा-सम्बन्धी ग्रन्थोंका हिन्दीमें—सरल हिन्दीमें—अनुवाद कराकर प्रकाशन कराया जाय ।

(४) संस्कृत और हिन्दी दोनों भाषाओंमें वैद्यक-परीक्षायें ली जायँ ।

(५) जिन वैद्योंने, किसी स्कूलसे या प्राइवेट तौरसे संस्कृत या हिन्दीमें वैद्यक-परीक्षा पास की हो, उन्हींसे इलाज कराया जाय । मूढ़ वैद्योंको पास भी न आने दिया जाय ।

(६) वैद्यका धन्धा करनेकी इच्छा रखनेवाले मनुष्य जब तक पूर्ण वैद्य न हो लें, तब तक चिकित्सा-कर्ममें हाथ न डालें; बल्कि ऐसा करनेको घोर पाप समझें ।

(७) अगर भारतवासी सचमुच ही आयुर्वेद-विद्याकी उन्नति चाहते हैं, भारतसे मूढ़ वैद्योंका अस्तित्व ही मिटा देना चाहते हैं; तो उन्हें, बड़ी उम्रमें भी, आयुर्वेद-ग्रन्थ स्वयं पढ़ने और अपनी सन्तानोंको, और विद्याओंके साथ, अवश्य पढ़वाने चाहियें । इससे बड़ा लाभ होगा । वे स्वयं दीर्घजीवी होंगे एवं रोगोंके हमलों और डाक्टरोंकी जेबें भरनेसे बचेंगे । सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि, सभीके थोड़ी-बहुत वैद्य-विद्या पढ़ने और जाननेसे मूर्ख वैद्योंका नाम ही भारतसे उठ जायगा । पहले ज़मानेमें, प्रायः सभी धनी लोग इस विद्याको पढ़ते थे । जबसे यह चाल उठ गई, भारतमें मूढ़ वैद्य बरसाती मेंडकों की तरह पैदा होने लग गये । धन्यवाद है ! भगवान् कृष्णचन्द्रको कि, इस "चिकित्सा-चन्द्रोदय" के निकलनेसे, अब, पचास फ़ीसदी अन्य व्यवसाय करनेवाले धनी और ग़रीब लोग भी फिर घर बैठे आयुर्वेद पढ़ने लगे ।

आयुर्वेदका पढ़ना सभीके लिये हितकर है।

मनुष्यमात्रको थोड़ा या वहुत चिकित्सा-विद्याका अभ्यास अवश्य ही करना चाहिये। क्योंकि चिकित्सा-शास्त्रके पढ़नेसे दीर्घायु प्राप्त करनेके उपाय, असमयकी मृत्युसे वचनेके उपाय, सदा निरोग या तन्दुरुस्त रहनेके नियम, रोग हो जानेपर रोगोंके नाश करनेके उपाय प्रभृति हजारों जानने योग्य विषय मनुष्यको मालूम होते हैं। जो आयुर्वेद-विद्यासे बिल्कुल कोरे रहते हैं, यहाँ तक कि दिनचर्या और रात्रिचर्य्या भी नहीं जानते, वे निश्चय ही अपनी अज्ञानताके कारण सदा रोगोंके फन्देमें फँसे रहते और थोड़ी उम्रमें ही मर जाते हैं; लेकिन जो लोग थोड़ी-बहुत आयुर्वेद-विद्या सीख लेते हैं, आयुर्वेदके नियमोंका पालन करते हैं, वे रोगोंसे सदा वचे रहते और लम्बी उम्र तक जीते तथा अपना और पराया दोनोंका भला करते हैं। जहाँ वैद्य नहीं होता, वहाँ रोग होनेपर अपनी और अपने पड़ौसीकी जीवन-रक्षा करते हैं।

शास्त्रमें मनुष्यकी एकसौ एक मृत्युएँ लिखी हैं। उनमेंसे एक मृत्यु तो सभीका संहार करती है। उससे कोई भी किसीको वचा नहीं सकता और न स्वयं ही बच सकता है; लेकिन और मृत्युएँ जो आगन्तुक कारणोंसे होती हैं, उनसे वैद्य मनुष्यको वचा सकता है। जब आयुर्वेदके जाननेवाला औरोंकी रक्षा कर सकता है, तब स्वयं भी

सावधान रहनेसे बच सकता है और यदि कारण उपस्थित हो ही जाय, तो अपनी रक्षा भी कर सकता है। इसके सिवा आयुर्वेदके जाननेवाला, किसी अवस्थामें भी, जीविका बिना भूखा नहीं मर सकता। आफत-मुसीबत, देश-परदेश, ग्राम और नगरमें, हर कहीं, हर हालतमें, वह अपनी और अपने साथियोंकी जीविकाका उपाय कर सकता है। इस विद्याका पढ़ना किसी दशामें भी व्यर्थ नहीं होता। देखिये शास्त्रमें लिखा है:—

आयुर्वेदोदितां युक्तिं कुर्वाणा विहिताश्चये।
पुण्यायुर्वृद्धिसंयुक्ता नीरोगाश्च भवन्तिते॥
क्वचिदर्थः क्वचिन्मैत्री, क्वचिद्धर्मः क्वचिद्यशः।
कर्माभ्यासः क्वचिच्चेति, चिकित्सा नास्ति निष्फला॥

जो आयुर्वेद और धर्मशास्त्रकी युक्तियोंके अनुसार चलते हैं, उनको रोग नहीं होते और उनके पुण्य और आयुकी वृद्धि होती है। चिकित्सा करनेसे कहीं धनकी प्राप्ति होती है, कहीं मित्रता होती है, कहीं धर्म होता है, कहीं यश मिलता है और कहीं क्रिया करनेसे अभ्यास बढ़ता है; किन्तु वैद्यक-विद्या कभी निष्फल नहीं होती। और भी कहा है:—

न देशो मनुजैर्हीनो, न मनुष्यो निरामयाः।
ततः सर्वत्र वैद्यानां, सुसिद्धा एव वृत्तयः॥

ऐसा कोई देश नहीं जहाँ मनुष्य न हों और ऐसा कोई मनुष्य नहीं जिसे रोग न होता हो, इसलिये वैद्योंकी आजीविका सर्वत्र सिद्ध है।

जबकि और विद्यायें निष्फल हो जाती हैं, उनके पढ़नेसे अनेक बार कोई लाभ नहीं होता, दस-दस और बारह-बारह वर्ष पढ़ने, ढेर धन स्वाहा करने और जने-जनेकी खुशामद करनेपर भी पेट नहीं भरता; तब लोग इसी विद्याको क्यों न पढ़ें, जो हर हालतमें सुखदायक और फलप्रद है। वैद्योंकी सभी जगह जरूरत रहती है। घरके ही काम करने लायक़ हों, तो अपनी कड़ी कमाईका धन ग़ैरोंको क्यों दिया जाय?

कौन ? वर्ण आयुर्वेद पढ़ सकते हैं !

अब इस बातपर विचार करना है कि, कौन-कौन वर्ण या जाति के लोग आयुर्वेद पढ़नेके अधिकारी हैं और कौन-कौन वर्ण या जातिके नहीं। समयको देखते तो, हमारी समझमें, हर कोई आयुर्वेद पढ़ सकता है। अगर यह बात न भी मानी जाय, तो भी ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य,—इन तीन वर्णोंके लिये तो शास्त्रमें आयुर्वेद पढ़नेकी खुली आज्ञा है। देखिये, "सुश्रुत" में लिखा है:—

ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यानामन्यतममन्वय वयः
शीलशौर्य शौचाचार विनय शक्तिबल मेधा
धृति स्मृति मति प्रतिपतियुक्तं तनु जिह-
वोष्ट दन्ताग्र मृजु वक्राक्षिनासं प्रसन्नाचित्त
वाक् चेष्टं क्लेशसहं च भिषक् शिष्यमुपनयेत्॥

शिक्षा देनेवाला वैद्य—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और इन तीन वर्णोंसे पैदा हुई अनुलोमज जातियोंको आयुर्वेद सिखा सकता है; किन्तु जिसे पढ़ानेके लिये चुने, उसमें इतनी बातें अवश्य देख ले—उसका वंश उत्तम है कि नहीं; वह पुरुषार्थी, पवित्र, सदाचारी, विनयी, सामर्थ्यवान् और बलवान् है कि नहीं; उसमे बुद्धि, धीरज, स्मरण-शक्ति, विचार-शक्ति और विद्वत्ता है कि नहीं; उसकी जीभ, उसके होठ, और उसके दाँतोंके अगले हिस्से पतले हैं कि नहीं; उसका चित्त, उसकी वाणी और उसकी चेष्टाएँ अच्छी हैं कि नहीं; अर्थात् अगर देखे कि पढ़नेवालेने अच्छे कुलमें जन्म लिया है, उसकी उम्र कठिन आयुर्वेद के पढ़ने समझने-योग्य है; वह पुरुषार्थी, पवित्र, सदाचारी, सामर्थ्यवान्,

बलवान्, बुद्धिमान्, धैर्यवान्, पढ़ी हुई बातको याद रख सकनेवाला, प्रत्येक बातपर विचार और विवेकसे तर्क-वितर्क करनेवाला है; उसकी जीभ, उसके होठ और दाँतोंके अग्रभाग पतले हैं; उसका चित्त स्थिर है, उसकी वाणी सुन्दर है; उसकी चेष्टाएँ उत्तम हैं और वह पढ़नेके कष्टको सह सकेगा। यदि इतने लक्षण हों तो उसे बेखटके आयुर्वेद पढ़ावे।

और भी देखिये, शूद्रके लिये भी आयुर्वेद पढ़ानेकी आज्ञा है:—

शूद्रमपि कुलगुणसम्पन्नं मन्त्रवर्ज्यमनुपनीतमध्यापयेदित्येके।

लिखा है कि, अच्छे कुलमें पैदा हुए गुणवान शूद्रको भी, बिना उपनयन-संस्कार कराये, वेदका मंत्र-भाग छोड़कर, आयुर्वेद पढ़ाया जा सकता है।

कहिये, अब तो चारों वर्णोंको आयुर्वेद पढ़ानेका अधिकार है, इस बातमें कोई संशय नहीं रहा। प्रत्येक मनुष्यको आयुर्वेद पढ़ना ज़रूरी है; इसीसे ऋषियोंने किसी भी वर्णको इस विद्याके पढ़नेसे महरूम नहीं रक्खा।

आयुर्वेद पढ़ने और पढ़ानेवालोंके ध्यान देने योग्य बातें ।

चिकित्सा-शास्त्र सब शास्त्रोंसे कठिन है, इसलिये इसके पढ़नेमें बड़ी सख्त मिहनत और चतुराईकी जरूरत है। आयुर्वेद पढ़नेकी इच्छा रखनेवालेको पहले हिन्दी और संस्कृतका पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिये; अथवा जो लोग हिन्दीमें आयुर्वेद पढ़ें, उन्हें हिन्दीमे और जो लोग संस्कृतमें पढ़ें उन्हें दोनोंमें पूर्ण योग्यता प्राप्त कर लेनी चाहिये। दोनोंमेंसे एक या दोनों भाषाओंमें पूर्ण अभिज्ञता प्राप्त किये बिना, आयुर्वेद सीखा जा नहीं सकता। आयुर्वेदका पढ़ना बालकोंका खेल नहीं है; इसलिये इसके पढ़नेमें परिश्रमसे जी न चुराना चाहिये। जो लोग परिश्रमसे जी चुराते हैं, सुख या आरामकी अभिलाषा रखते हैं, उन्हें कोई भी विद्या पूर्ण रूपसे प्राप्त नहीं हो सकती, जिसमें आयुर्वेदका आना तो नितान्त असम्भव ही है। जिससे आयुर्वेद सीखा जाय, उसके सामने हँसने, बकवाद करने और अन्यान्य प्रकारके ऐब या चपलता प्रभृतिसे सदा दूर रहना चाहिये। गुरुसे सदा निष्कपट व्यवहार रखना चाहिये, भूलकर भी धोखेबाजी करना या छल-छिद्रोंसे काम लेना उचित नहीं। गुरुमें सच्ची भक्ति और श्रद्धा रखनी चाहिये एवं तन-मन-धनसे गुरुकी सेवा करनी चाहिये। सदा ऐसे कर्म करने चाहियें, जिनसे शिष्यके प्रति गुरुका प्रेम दिन-ब-दिन बढ़े क्योंकि यह विद्या गुरुकी पूर्ण कृपा बिना नहीं आती। गुरुको भी अपने भक्त, विनयी और सदाचारी शिष्यको निष्कपट भावसे दिल खोलकर, अपनी सामर्थ्य-

भर, चिकित्सा-शास्त्र पढ़ाना चाहिये। देखिये प्राचीन कालके वैद्य-गुरु किस तरहकी प्रतिज्ञा करके अपने शिष्योंको पढ़ाते थे। गुरु महोदय कहते थेः—

अहं वा त्वयि सभ्यः वर्त्तमाने यद्यऽन्यथा-
दर्शी स्यामेनोभाग्भवेयमफला विद्यश्च ॥

"तेरे अच्छा वर्ताव करनेपर भी, यदि मैं तुझे अच्छी तरह न पढ़ाऊँ, तो मैं पापका भागी होऊँ और मेरी विद्या निष्फल हो।" आजकल ऐसे गुरु दुर्लभ हैं।

आयुर्वेद पढ़नेवालेको आयुर्वेदका प्रत्येक अङ्ग भली भाँति पढ़ना चाहिये। प्रत्येक अङ्ग ही नहीं, छोटी-से-छोटी परिभाषाको भी बिना अच्छी तरह समझे और याद किये न छोड़ना चाहिये। तोताकी तरह रटना अच्छा नहीं; प्रत्येक बात गुरुसे पूछकर अच्छी तरह समझनी चाहिये; बिना समझे ढेरका ढेर पढ़नेसे कोई लाभ नहीं। "सुश्रुत" में कहा हैः—

यथाखरश्चन्दनभारवाही भारस्यवेत्ता न तु चन्दनस्य।
एवं ही शास्त्राणि बहूनधीत्य चार्थेषु मूढाः खरवद वहन्ति ॥

चन्दनका बोझा उठानेवाला गधा केवल भारकी बात जानता है, किन्तु चन्दन और उसके गुणोंको नहीं जानता; इसी तरह जो बहुतसे शास्त्रोंको पढ़ लेते हैं, किन्तु उनके अर्थोंको नहीं समझते, वे गधेकी तरह भार उठानेवाले होते हैं।

आजकल के वैद्योंकी तरह एकाध शास्त्र पढ़कर ही विद्यार्थीको सन्तोष न कर लेना चाहिये। वैद्यक-विद्या पढ़नेवाला जितने ही शास्त्र अधिक पढ़ेगा, उसे चिकित्सा-कर्ममें उतनी ही अधिक सफलता होगी। कोई भी मनुष्य केवल एक या दो ग्रन्थ पढ़ लेनेसे चिकित्सा करनेके योग्य नहीं हो जाता, क्योंकि एक ही शास्त्रमें सारी बातें नहीं लिखी होतीं। यों तो सभी शास्त्रोंमें एक ही तरहकी बातें हैं, फिर

भी जो एक में नहीं है वह दूसरेमें है और जो दूसरेमें नहीं है वह तीसरेमें है। इसलिये प्रत्येक शास्त्रका पढ़ना आवश्यक है।" देखिये, इस विषयमें "सुश्रुत" महाशय कैसी अच्छी सलाह देते हैं। वे कहते हैं:—

एकशास्त्रमधीयानो न विद्याच्छास्त्र निश्चयम् ।
तस्मादबहुश्रुतः शास्त्रं दिजानीयाच्चिकित्सकः ॥
शास्त्रं गुरुमुखोदगीर्णमादायोपास्य चाऽसकृत् ।
यः कर्म कुरुते वैद्यः स वैद्योऽन्ये तु तस्कराः ॥

जो मनुष्य एक शास्त्रको पढ़ लेता है, वह शास्त्रके निश्चयको नहीं जान सकता; किन्तु जो बहुतसे शास्त्रोंको पढ़ता और सुनता है, वही चिकित्साके मर्मको समझता है। जो मनुष्य गुरुके मुखसे पढ़े हुए शास्त्रपर बारम्बार विचार करता है और विचारकर काम करता है वही वैद्य है; उसके सिवा और सब चोर हैं।

विद्यार्थीको रोग-परीक्षा और औषधि-विज्ञान दोनों विषय खूब अच्छी तरह सीखने चाहियें। जिस वैद्यको रोगोंके निदान-कारण, पूर्वरूप, उपशय और सम्प्राप्ति—इन पाँचों का भली भाँति ज्ञान नहीं होता, वह वैद्य दवा करना जानने पर भी दो कौड़ीका होता है। जिन वैद्यों को रोग की पहचान नहीं, जिन हकीमोंको मर्जकी तशख़ीस नहीं, वह हरगिज़ कामयाब नहीं होते; उन्हें चिकित्सा में सफलता नहीं होती। यह दृढ़ निश्चय है कि, रोग-परीक्षामें निपुण हुए बिना, वैद्यको सफलता हो ही नहीं सकती। मान लो, कहीं धूलमें लट्ठ लग हो गया, किसी तरह सफलता हो ही गयी, तो भी अधिकांश स्थलोंमें असफलता ही होगी। रोगको न समझनेवाले वैद्यके हाथमें जाकर हजारों रोगियोंके रोग असाध्य हो जाते हैं; हजारों रोगियोंके प्राण असमयमें ही नाश होते हैं। इसीसे कहा है कि, आयुर्वेदमें "रोग-परीक्षा विद्या" मुख्य है; उसका जानना परमावश्यक है। शास्त्रोंमें कहा है:—

यस्तु रोगमविज्ञाय, कर्माण्यारभते भिषक्।
अप्यौषध विधानज्ञस्तस्य सिद्धिर्यदृच्छया॥
भेषजं केवलं कर्त्तुं यो जानाति न चामयम्।
वैद्यकर्म स चेत कुर्याद्वैधमर्हति राजतः॥

जो वैद्य औषधियोंके प्रयोगकी विधि यानी दवा देनेकी रीति तो जानता है, किन्तु रोगोंको नहीं पहचानता; लेकिन बिना रोगके पहचाने ही चिकित्सा करना आरम्भ कर देता है, उसे कभी सफलता हो जाती है और कभी नहीं होती।

जो मनुष्य केवल औषधि देना जानता है; किन्तु रोगोंको नहीं पहचानता; अगर ऐसा मनुष्य चिकित्सा-कर्म करे, तो राजाको उसे प्राणदण्डकी सजा देनी चाहिए।

देखिये, हिन्दू राजाओंके राज्यमें मूढ़ वैद्योंके लिए कैसी-कैसी कठोर सजायें मुक़र्रर थीं; इसीसे उस ज़मानेमें मूढ़ वैद्य न होते थे। बहुत ही ठीक बात है। वैद्यको रोग-परीक्षामें अवश्य निपुण होना चाहिए। क्योंकि जिस तरह तीर या गोली चलानेवालेका काम पहले शिस्त लगाना और पीछे गोली मारना है; उसी तरह वैद्यका काम सबसे पहले रोगका निर्णय करना और पीछे दवा देना है। यदि निशानेबाज़ बिना निशाना ठीक किये ही गोली छोड़ेगा, तो कदाचित ही गोली निशानेपर लगेगी, किन्तु वह निशाना ठीक करके गोली चलावेगा, तो गोली ठीक निशानेपर लगेगी, कभी वार खाली न जायगा। इसी तरह वैद्य यदि रोगीके रोगको अच्छी तरह समझकर दवा देगा, तो निश्चय ही उसे सफलता होगी। 'रोग-परीक्षा' वैद्यके कामोंमें मुख्य है। इसीसे शास्त्रमें पहले ही रोग-परीक्षा करना मुख्य लिखा है। कहा है:—

रोगमादौ परीक्षेत ततोऽनन्तरमौषधम्।
ततः कर्म भिषक् पश्चात् ज्ञानपूर्वं समाचरेत्॥
यस्तु रोगविशेषज्ञः सर्वभैषज्य कोविदः।
देश-कालप्रमाणज्ञस्तस्य सिद्धिरसंशयम्॥

वैद्यको उचित है कि पहले रोगकी परीक्षा करे, पीछे औषधिकी परीक्षा करे, जब रोग और औषधि दोनोंकी परीक्षा कर चुके तब ज्ञान-पूर्वक चिकित्सा करे ।

जो वैद्य रोगोंके भेदोंको जानता है, जो वैद्य सब तरहकी दवाओंको जानता है, जो देश-काल और मात्राके प्रमाणको जानता है, उसकी सिद्धि अवश्य होती है ।

रोगको पहचानना—मर्ज़की तशख़ीस करना बड़ा कठिन काम है । बाज़-बाज़ मौक़ोंपर अच्छे-अच्छे अनुभवी वैद्य इस काममें चकर खा जाते हैं । इसलिए शास्त्रकारोंने रोग पहचाननेके बहुतसे तरीके लिखे हैं :—

(१) आप्तोपदेश यानी शास्त्रोपदेशसे ।

(२) प्रत्यक्ष ज्ञान द्वारा ।

(३) अनुमान-द्वारा ।

किसीने लिखा है कि देखने, छूने और हाल पूछनेसे ही प्रायः सब रोगोंका ज्ञान हो जाता है, किन्तु सुश्रुतने इसके लिए छे उपाय लिखे हैं । उन्होंने कहा है:—

(१) कानसे, (२) चमड़ेसे, (३) आँखोंसे, (४) जीभसे, (५) नाकसे—इन पाँचों इन्द्रियोंसे तथा (६) रोगीसे हाल पूछनेसे, रोगोंका ज्ञान हो जाता है । सुश्रुताचार्यके बादके विद्वानोंने रोग जाननेका उपाय "नाड़ी परीक्षा" और निकाला है । इन सब परीक्षाओंकी बात हम आगे चलकर अच्छी तरह समझावेंगे । यहाँ तो इतना केवल विद्यार्थी के ध्यान देनेके लिए लिखा है । पहला काम विद्यार्थीका रोगोंके नाम, और उनके रूप प्रभृतिका ज्ञान प्राप्त करना और उनको हर समय कण्ठाग्र रखना है । अगर वैद्योंको रोगके लक्षण ही याद न होंगे, तो प्रत्यक्ष और अनुमान से कोई लाभ न होगा ।

रोग-परीक्षाके अन्तर्गत और भी कितनी ही परीक्षायें होती हैं; उन सब परीक्षाओंके भी हो जानेपर, 'रोग-परीक्षा'का काम पूरा होता

है। यहाँ हम चन्द परीक्षाओंकी बात विद्यार्थीका औत्सुक्य मिटानेके लिये लिखते हैं। इनको खूब खोल-खोलकर आगे समझावेंगे। यहाँ यही समझाना चाहते हैं कि, चरकके लिखे तीनों उपायों अथवा सुश्रुत के लिखे छै उपायोंसे वैद्यको कौन-कौन परीक्षायें करनी होती हैं। "सुश्रुत" में लिखा हैः—

आतुरमुपक्रमभाणेन भिषजायुरेवादौ परीक्ष्येत्।
सत्यप्यायुषि व्याध्यृत्वग्नियो देहवल सत्व
सात्म्य प्रकृति भेषज देशान् परीक्ष्येत्॥

रोगीकी चिकित्सा करनेवालेको पहले (१) आयु, (२) रोग, (३) ऋतु, (४) अग्नि, (५) अवस्था, (६) देह, (७) बल, (८) सत्व, (९) सात्म्य, (१०) प्रकृति, (११) औषधि और (१२) देश प्रभृतिकी परीक्षा करके चिकित्सा आरम्भ करनी चाहिये।

पहले आयुकी परीक्षा बड़े मतलबसे लिखी है। इसका मतलब यह है कि, पहले आयुको देखना चाहिये। अगर रोगीकी उम्र मालूम हो, तो इलाज करना चाहिये। अगर रोगीकी उम्र ही बाक़ी न हो, तो वैद्यको भूलकर भी इलाज न करना चाहिये; क्योंकि जिसकी उम्र ही पूरी हो चुकी है, उसकी उम्र वैद्य नहीं बढ़ा सकता। वैद्य तो, उम्रके होनेपर, रोगीको रोगमुक्त कर सकता है। कहा हैः—

भिषगादौ परीक्षेत रुग्णस्यायुः प्रयत्नतः।
तत आयुषि विस्तीर्णे चिकित्सा सफला भवेत्॥
व्याधेस्तत्व परिज्ञानं, वेदनायाश्च निग्रहः।
एतद्वैद्यस्य वैद्यत्वं न वैद्यः प्रभुरायुषः॥

वैद्यको पहले यत्नपूर्व्वक रोगीकी आयु-परीक्षा करनी चाहिये, क्योंकि आयुके दीर्घ होनेसे ही यानी लम्बी उम्र होनेसे ही चिकित्सा सफल होती है। रोगके तत्वको जानना और रोगीकी तकलीफ़को दूर करना—यही वैद्यका काम है। वैद्य आयुका स्वामी नहीं है, यानी जिसकी आयु नहीं रही है, उसे आयु दे दे, वैद्यमें यह सामर्थ्य नहीं है।

जिस तरह रोग-परीक्षामें पण्डित होना आवश्यक है; उसी तरह औषधियोंके मामलेमें भी पूर्ण जानकारी रखना उचित है। जो वैद्य केवल रोगोंकी पहचान तो जानता है, मगर औषधियोंके मामलेमें कुछ नहीं समझता, उसे चिकित्सामें कभी सफलता नहीं होती। केवल रोग पहचान लेनेसे ही, बिना दवाके, रोगीका रोग निवारण हो नहीं सकता; इसलिये यदि कोई रोगी ऐसे वैद्यके हाथमें पड़ जाता है, तो वृथा प्राण गँवाता है। कहा है:—

यस्तु केवल रोगज्ञो भेषजेष्वविचक्षणः।
तं वैद्यं प्राप्य रोगी स्याद् यथा नौर्नाविकं विना॥

जो वैद्य केवल रोगोंको पहचानता है, किन्तु औषधि करना नहीं जानता, अगर ऐसा वैद्य रोगीकी चिकित्सा करता है, तो रोगी इस तरह विपदमें फँसता है, जिस तरह नाव बिना मल्लाहोंके विपद्में फँसती है।

औषधियोंके नाम और उनकी पहचान जान लेनेसे ही काम नहीं चल सकता। औषधियोंके गुण, बल, वीर्य, विपाक आदि सभी विषयोंमें जानकारी रखनेकी ज़रूरत है। जो औषधियोंके विषयमें इतना भी नहीं जानता, वह वृथा चिकित्सक होनेका ढोंग करता है और प्राणियोंकी प्राणहानि करता है। "चरक" में लिखा है:—

औषधीर्नाम रूपाभ्यां जानन्ते ह्य जपावने।
अविपाश्चैव गोपाश्चये चान्ये वनवासिनः॥
न नाम ज्ञानमात्रेण रूपज्ञानेन वा पुनः।
औषधीनां परां प्राप्ति कश्चिद्वेदितुमर्हति॥
योग विन्नाम रूपज्ञस्तासां तत्त्वविदुच्यते।
किं पुनर्यो विज्ञानीयादौषधीः सर्वथाभिषक्॥
योगमासन्त यो विद्या देशकालोपपादितम्।
पुरुषं पुरुषं विद्य स विज्ञेयो भिषक्तमः॥

गाय, भेड़ और बकरी चरानेवाले और जङ्गलमें रहनेवाले जङ्गलमें पैदा होनेवाली दवाओंके नाम और रूप जानते हैं, परन्तु मनुष्य औषधियोंके नाम और रूप जाननेसे ही औषधियोंके काममें लानेकी तरकीब

नहीं जान सकता। जो औषधियोंके नाम और रूप एवं उनके काममें लानेकी विधि जानता है, उसे "औषधि-तत्त्वज्ञ' कहते हैं और जो जङ्गलकी जड़ी-बूटियोंके नाम आदि पूरी तरहसे जानकर, उनको देश-काल और व्यक्ति-भेदसे काममें लाता है, उसे श्रेष्ठ वैद्य कहते हैं।

मतलब यह है कि वैद्य-विद्या सीखनेवालेको दवाओंके नाम, रूप, गुण, बल, वीर्य्य, विपाक और प्रभाव आदि अच्छी तरहसे सीखने चाहियें। यह विद्या "निघण्टु" रटने और जङ्गलमें जाकर जङ्गली लोगोंकी सहायतासे जड़ी-बूटियोंके देखनेसे अच्छी तरह आ सकती है। जो वैद्य "निघण्टु" नहीं जानता, उसकी क़दम-क़दमपर हँसी होती है। कहा है—

निघण्टु विना वैद्यो, विद्वान् व्याकरणं विना
अनभ्यासेन धानुष्कस्त्रयो हासस्य भाजनम्।

विना निघण्टु पढ़ा वैद्य, बिना व्याकरण पढ़ा विद्वान् और बिना अभ्यासका तीरन्दाज़—तीनों अपनी हँसी कराते हैं।

जो कुछ ऊपर लिखा है, उसके सिवा औषधियोंके प्रयोगकी विधि भी सद्वैद्यसे अच्छी तरह सीखनी चाहिये। यदि केवल दवाओंके नाम, रूप, गुण आदि मालूम हों, किन्तु उनके प्रयोग करनेकी रीति न मालूम हो, तो भी अर्थका अनर्थ होनेकी सम्भावना रहती है। यदि तीक्ष्ण विष भी क़ायदेसे काममें लाया जाय, तो उत्तम औषधिका काम देता है। यदि उत्तम औषधि भी, बेक़ायदे, ऊटपटाँग रीतिसे, काममें लाई जाय, तो तीक्ष्ण विषका काम करती है। घृत और मधु दोनों ही परमोत्तम पदार्थ हैं, किन्तु कोई अनजान इन दोनोंको समान भागमें मिलाकर काममें लावे, तो यह विषके समान हो जायँगे। इसलिये किसी विद्वान् और अनुभवी वैद्यके पास रहकर, दवा बनाने और चिकित्सा करनेका अभ्यास करना चाहिये। जो मनुष्य पूर्ण रूपसे शास्त्रोंको पढ़-समझ लेता है, और अनेक प्रकारकी अच्छी-अच्छी औषधियाँ तैयार रखता है, तो भी अगर उसने किसीके पास रहकर अपनी आँखोंसे चिकित्सा नहीं

देखी, स्वयं अभ्यास नहीं किया, वह बहुधा घबराया करता है। इसलिये चिकित्सा-कर्म अवश्य देखना चाहिये। कहा है:—

यस्तु केवल शास्त्रज्ञः क्रियास्वकुशलो भिषक्।
स मुह्यति आतुरं प्राप्य यथा भीरुरिवाहवमे॥
यस्तूभयज्ञो मतिमान्समर्थोर्थसाधने।
आहवे कर्म निर्वोढुं द्विचक्रः स्यन्दनो यथा॥
पीण चाराद्यथाऽचक्षुर ज्ञानाद् भीत भीतवत्।
नौर्मारुतवशोवाज्ञो भिषक चरति कर्मसु॥
तस्माच्छास्त्रेऽर्थ विज्ञाने प्रवृत्तौ कर्म दर्शने।
भिषक चतुष्टये युक्तः प्राणाभिपर उच्यते॥

जो वैद्य केवल चिकित्सा-शास्त्रको जानता है, लेकिन चिकित्सा करनेमें कुशल नहीं है; वह रोगीके पास जाकर इस तरह घबराता है, जिस तरह कायर पुरुष लड़ाईमें जाकर घबराता है।

शास्त्र और क्रिया दोनोंको पूर्ण तरहसे जाननेवाला वैद्य उसी तरह अपना प्रयोजन सिद्ध कर सकता है; जिस तरह दो पहियोंका रथ युद्धमें अपना काम कर सकता है।

जिस तरह अन्धा, डरके मारे, आगेको हाथ चला-चलाकर चलता है, तूफ़ानके जोरसे नाव जिस तरह उलट-पुलट होती या डगमगाती हुई चलती है; उसी तरह मूर्ख वैद्य घबराकर काम करता है।

जो शास्त्र और शास्त्रके अर्थको जानता है, जिसने औषधि करनेमें अनुभव प्राप्त कर लिया है, जिसने वैद्योंकी चिकित्सा-परिपाटी अच्छी तरह देख ली है, उस वैद्यको "प्राणदाता" कहते हैं।

बहुत लिखनेसे क्या, हमने अनेक बातें विद्यार्थीके जाननेके योग्य ऊपर लिखी हैं। इतनेसे ही विद्यार्थी बहुत कुछ समझ सकता है। सारांश यह कि, विद्यार्थीको चिकित्सा-शास्त्रके सब अङ्ग अच्छी तरहसे पढ़ने-समझने चाहियें। साथ ही किसी अनुभवी और विद्वान् वैद्यके पास रहकर चिकित्सा-कर्मका अभ्यास करना चाहिये; तभी वह पूर्ण वैद्य होकर मनुष्योंके इलाजमें हाथ डाल सकता है।

चिकित्सा-कर्म आरम्भ करने वालोंके लिये उपयोगी शिक्षा।

वैद्य जब तक आयुर्वेदके सब अङ्गोंको अच्छी तरह न पढ़ ले; गुरुके पास रहकर, गुरुके साथ-साथ जाकर चिकित्साका अभ्यास न कर ले; तब तक स्वयं किसीका इलाज न करे।

(२) वैद्यको चाहिये कि किसीको अनजानी, बिना आज़माई, दवा न दे; क्योंकि अनजानी दवा अनेक बार विष, शस्त्र, अग्नि और इन्द्रके वज्रके समान अनर्थ करती है। यदि किसी वैद्यको किसी दवाके नाम, रूप और गुण तो मालूम हों, किन्तु उसके देनेकी विधि न मालूम हो, तो रोगीको भूलकर भी न दे; क्योंकि अनजानपनसे, बेक़ायदे, दी हुई दवा बहुधा अनर्थ करती है; रोगीका रोग बढ़ता है अथवा उसके प्राण नाश होते हैं, और वैद्यका इहलोक और परलोक दोनोंमें बुरा होता है। इस लोकमें बदनामी होती और उस लोकमें दण्ड मिलता है।

(३) अगर तुमने वैद्यकशास्त्र नहीं पढ़ा है, अगर तुमने गुरुके पास रहकर चिकित्साका अभ्यास नहीं किया है, तो अपने पेट पालनेके लिये ज़बर्दस्ती वैद्य मत बनो। "चरक" में कहा है:—

वरमाशी विषविषं क्वथितं ताम्रमेव वा।
पीतमत्याग्नि सन्तप्ता भक्षिता वाष्पयो गुडाः॥
न तु श्रुतवतां वेशं विभ्रता शरणागतात्।
गृहीतमन्नं पानं वा वित्तं वा रोगपीडितात्॥

साँपका जहर पीना अच्छा, गर्मागर्म औटाये ताम्बेका पीना अच्छा, आगमें लाल किये हुए लोहेके गोलेका निगलना अच्छा; किन्तु पढ़े-लिखे वैद्यका-सा रूप बनाकर, शरणमें आये हुए रोगीसे अन्नपान या धन लेना हरगिज़ अच्छा नहीं।

(४) अगर आपमें वैद्यके सब गुण हैं, और वैद्यकी सम्पद आपके पास है, तो आप बेखटके मनुष्योंकी प्राणरक्षा कीजिये, क्योंकि वैद्य मनुष्योंका प्राणरक्षक कहलाता है।

अगर आप औषधिका उत्तम रूपसे प्रयोग करेंगे, तो आपको चिकित्सामें सफलता होगी; सफलता होनेसे आपकी नामवरी फैलेगी; नामवरी होनेसे लक्ष्मी आपके चरणोंमें लोटेगी।

(५) अगर आप उत्तम वैद्य होना चाहते हैं, तो युक्तिसे काम लें; क्योंकि चिकित्साकी सफलता युक्तिके अधीन है। युक्तिके जाननेवाले वैद्यकी सदा जय होती है। युक्ति जाननेवाला वैद्य औषधि जानने-वाले वैद्योंसे ऊँचा रहता है। मतलब यह कि, दवाओंके गुण और रोगोंकी पहचान जाननेसे वैद्य उत्तम नहीं हो सकता, किन्तु कुछ ऊपरी युक्तियोंका जानना भी आवश्यक है। जैसे कोई पाचक औषधि किसी रोगीको ढेर सारी एक ही बार खिला देनेवाले वैद्यसे, कई बारमें उस औषधिको खिलानेवाला वैद्य उत्तम है। जो वैद्य मूर्खतासे, बिना सोचे-समझे, रोगीको कोई अमृत-समान दवा एक बार ही खिला देगा, उसके रोगीको निस्सन्देह आराम न होगा; उपकारके बदले अपकार होगा। किन्तु जो वैद्य समझ-बूझकर, रोगीका बलाबल विचारकर, दवाको कई बारमें रोगीको देगा; तो दवा अपना चमत्कार दिखावेगी। मान लो, किसी रोगीको जोरसे दस्त लग रहे हैं, यदि उस रोगीको एक बार ही एक छटाँक औषधि दे दी जाय; तो वह सारी दवा मलके साथ मिलकर, दस्तोंके साथ निकल जायगी और कोई लाभ न करेगी। यदि उसी दवाके चार या छै भाग करके, दो दो

घण्टेपर दिये जायँ, तो वह पेटमें पचकर दस्तोंको बन्द कर देगी। इसीको "युक्ति" कहते हैं। यह किसीके सिखानेसे नहीं आती—अपने आप ही आती है।

(६) वैद्यको चाहिये कि, पहले रोगीको दवाकी हलकी मात्रा दे। बाज़-बाज़ औक़ात अच्छी दवा भी रोगीके मुआफ़िक़ न होनेसे फ़ायदेके बजाय उल्टा नुक़सान करती है। जब देखे कि दवाने कोई हानि नहीं की; तब वैद्य दवाकी दूनी या ड्यौढ़ी मात्रा कर दे। इस तरह पहले थोड़ी मात्रामें दवा देने और पीछे हानि-लाभ देखकर मात्रा बढ़ा देनेसे कोई उपद्रव भी न होगा और रोगी आराम भी हो जायगा। अम्लपित्त-रोगमें 'क्षार' बहुधा लाभदायक होता है; किन्तु अगर वही क्षार अधिक मात्रा में दे दिया जाता है; तो दस्त होने लगते हैं, खट्टी-खट्टी डकारें आने लगती हैं अथवा उदरस्तम्भ हो जाता है। अगर क्षारकी मात्रा अधिक न दी जाय, थोड़ी-थोड़ी कई बारमें दी जाय, तो कोई भी उपद्रव न हो और रोग आराम हो जाय। जो वैद्य बुद्धिमान् और युक्तिके जाननेवाले होते हैं; वे रोग और रोगी दोनोंका विचार करके, मात्रा और कालके विभागसे, इलाज करते और सिद्धिलाभ करते हैं। "चरक" में लिखा है:—

मात्राकालाश्रया युक्तिः, सिद्धिर्युक्तौ प्रतिष्ठिता ।
तिष्ठत्युपरि युक्तिज्ञो, द्रव्यज्ञानवतां सदा ॥

युक्ति, मात्रा और कालके आश्रय है, और सिद्धि युक्तिके आश्रय है, इसलिये युक्तिवान् वैद्य, दवाओंके ज्ञान रखनेवाले वैद्यसे श्रेष्ठ होता है।

(७) वैद्य, औषधि, सेवक और रोगी, ये चार चिकित्साके पाद हैं, अर्थात् इन चारोंके ठीक होनेसे रोग शान्त होता है। इन चारोंमेंसे प्रत्येकमें चार-चार गुण होते हैं:—

शास्त्रमें पारदर्शिता, बहुदर्शिता, चतुराई और पवित्रता—ये वैद्यके चार गुण हैं।

बहुधा, योग्यता, अनेक प्रकार के योग-वियोग-पूर्व्वक कल्पना और कीड़े प्रभृतिसे रहित होना—ये औषधिके चार गुण हैं ।

रोगीकी सेवा करना जानना, चतुराई, स्वामिभक्ति और पवित्रता—ये सेवकके चार गुण हैं ।

सब बातोंका याद रखना, वैद्यकी आज्ञाका अक्षर-अक्षर पालन करना, निर्भय होना और अपने रोगका यथार्थ हाल कहना—ये रोगीके चार गुण हैं ।

इसका मतलब यह है कि, यदि वैद्य, औषधि, सेवक और रोगीमें ऊपर कहे हुए गुण हों, तो बहुधा आरोग्यकी ही सम्भावना रहती है । इसलिये यदि वैद्य चारों गुणवाला हो, तो उसे औरोंके गुण देखकर इलाज करना चाहिये; अर्थात् यदि रोगीकी सेवा-शुश्रूषा करनेवाला मूर्ख हो, रोगी वैद्यकी आज्ञा माननेवाला न हो, अपने रोगका ठीक-ठीक हाल कहनेवाला न हो, वैद्यका कहा हुआ उसे याद न रहता हो—ऐसे-ऐसे दोष हों, तो वैद्य हरगिज इलाज न करे अन्यथा अपयशका पात्र होगा ।

भिषक् प्रभृति पादचतुष्टय,—ये सोलह गुण-सम्पन्न होनेसे रोग और आरोग्यके कारण हैं, परन्तु इन पादचतुष्टयोंमें वैद्य प्रधान है; क्योंकि उपदेश करना, आगा-पीछा सोचना, दवा देनेकी तरकीब बताना प्रभृति सब काम वैद्यके हैं । जिस तरह रसोइया, रसोई करनेके बर्तन, अग्नि और ईंधन—इन चारोंसे रसोई तैयार होती है; पर इनमें "रसोइया" ही प्रधान है । यदि रसोइया उत्तम न हो, तो रसोई-कार्यके कारण-स्वरूप—बर्तन, ईंधन और अग्नि ये कितने ही अच्छे क्यों न हों, रसोई हरगिज उत्तम न होगी । इसी तरह औषधि, परिचारक (सेवक) और रोगीके अपने-अपने चारों गुण-युक्त होनेपर भी, यदि वैद्य अच्छा न हो, तो हरगिज आरोग्य-लाभ न होगा । इसीलिये वैद्यको प्रधान कहा है । और भी सुनिये,—कुम्हार, चाक, मिट्टी और सूत इन चारोंसे घड़ा बनता है । लेकिन चाक, मिट्टी और

सूत हो; किन्तु कुम्हार न हो, तो घड़ा नहीं बन सकता; उसी तरह वैद्यके बिना रोगी, परिचारक और औषधिसे चिकित्सा नहीं हो सकती।' मतलब यह निकला कि, सबमें वैद्य ही प्रधान है। उसीका उत्तम होना जरूरी है। चिकित्साकी सफलता-असफलताका दारमदार वैद्यपर ही निर्भर है। इसलिये वैद्यकी ज़िम्मेदारी बहुत बड़ी है।

(८) यदि आप चिकित्सा-कर्ममें सफलता प्राप्त करना चाहें, तो आप शास्त्र और बुद्धि दोनोंसे काम लीजिये। शास्त्र दर्पण है, और अपनी बुद्धि प्रतिबिम्ब—अक्स—है। जिस तरह दर्पण और प्रतिबिम्बसे स्वरूपका ज्ञान होता है; उसी प्रकार शास्त्र और बुद्धि दोनोंसे जो चिकित्सा की जाती है, वही चिकित्सा उत्तम होती है। जो वैद्य केवल शास्त्रपर चलते हैं, अपनी बुद्धिसे काम नहीं लेते, उन्हें सफलता नहीं होती।

(९) वैद्यको उचित है कि, रोगियोंसे मैत्री करे और करुणासे काम ले; उत्साहके साथ साध्य रोगीकी चिकित्सा करे, स्वस्थ शरीर-वाले या मरनेवाले रोगीको दवा न दे।

(१०) वैद्यको रोग-परीक्षा करते समय साध्य और असाध्यका ख़याल कभी न भूलना चाहिये। जो वैद्य साध्य और असाध्य दो प्रकारके विभाग करके चिकित्सा करता है, वह निश्चय ही रोगको आराम करता है; किन्तु जो वैद्य साध्य और असाध्यका ख़याल नहीं करता, असाध्य रोगीका भी इलाज करना आरम्भ कर देता है; उसकी दुनियाँमें बदनामी होती है। लोग कहते हैं,—जब वैद्यजीको साध्यअसाध्यका ही ज्ञान नहीं, तब क्यों चिकित्सा करके अपनी धूल उड़वाते हैं? शास्त्रमें कहा है:—

ये न कुर्वन्त्यसाध्यतां चिकित्सां ते भिषग्वराः।
अतः वैद्यः श्रमः कार्यः साध्यासाध्य परीक्षणे॥
साध्यासाध्य विभागज्ञो, ज्ञानपूर्वं चिकित्सकः।
काले चारभते कर्म यत्तत् साधयति ध्रुवम्॥
स्वार्थं विद्या यशो हानिमुपक्रोशमसंग्रहम्।

आयुके होनेपर भी रोगी विना उपायोंके नहीं उठ सकता, जिस तरह कीचमें फँसा हुआ हाथी विना खींचे नहीं निकल सकता।

जिस तरह तेल बत्ती वगैरःके होनेपर भी, दीपक हवाके झोंकेसे बुझ जाता है; उसी तरह, आयु होनेपर भी, रोगी विना चिकित्साके मर जाता है।

(१२) साध्यासाध्य परीक्षाके सिवा, वैद्यको "अरिष्ट-चिह्न" अवश्य देखने चाहिएँ। अरिष्ट-चिह्नोंसे वैद्यको मृत्युका पता बहुत ठीक लगता है। पहले वैद्य अरिष्ट-चिह्नोंके जानकार और अभ्यासी होनेके कारण ही, बरसों पहले रोगीकी मृत्यु बता दिया करते थे। इसलिए वैद्यको अरिष्ट-चिह्नोंकी परीक्षा अवश्यमेव करनी चाहिये। जो वैद्य "अरिष्ट-चिह्नों" को देखकर इलाज करता है, वह देवताकी तरह पुजता है। जो विना अरिष्ट-चिह्नोंको देखे इलाज करते हैं, वे बदनाम होते हैं। अरिष्ट-चिह्नोंके विषयमें हम आगे लिखेंगे; तथापि इस जगह इतना बता देनेमें हर्ज नहीं कि, अरिष्ट किसे कहते हैं। जिन लक्षणोंके होनेसे रोगीकी मृत्यु निश्चय ही हो, यदि ऐसे ही चिह्न नज़र आवें, तो उन चिह्नोंको "अरिष्ट" या "रिष्ट" कहते हैं। जिस तरह वृक्षमें फूल आनेसे फल लगनेकी, धूआँ होनेसे आग होनेकी और बादल होनेसे वर्षाकी सम्भावना होती है; उसी तरह अरिष्ट-चिह्न होनेसे मृत्यु होनेकी सम्भावना होती है। वङ्गसेन महोदय कहते हैं:—

न त्वरिष्टस्य जातस्य नाशोऽस्ति मरणादृते ।
मरणञ्चापि तन्नास्ति यन्नारिष्टं पुरः सरम् ॥

अरिष्ट होनेसे मृत्यु अवश्य होती है। वह मृत्यु नहीं, जिसमें पहले अरिष्टके लक्षण न हों और वह अरिष्ट नहीं, जिसके होनेसे मरण न हो। वाग्भट्टने कहा है:—

विना अरिष्टं नास्ति मरण, दृष्ट रिष्टम् च जीवितम् ।
अरिष्टे रिष्ट विज्ञानं न च रिष्टेऽत्य नैपुणात् ॥

अरिष्ट विना मरण नहीं होता और अरिष्ट होनेसे जिन्दगी नहीं

रहती। जो अरिष्ट-चिह्न जाननेमें निपुण नहीं हैं, उनको अरिष्ट-ज्ञान नहीं होता।

वङ्गसेनने कहा है:—

असिद्धिं प्राप्नुयाल्लोके, प्रतिकुर्वन गतायुषः।
तस्माद्यत्नेनारिष्टानि लक्षयेत् कुशलो भिषक्॥

जिसकी आयु पूरी हो गई है, उस मनुष्यकी चिकित्सा करनेसे वैद्यकी सिद्धि नहीं होती। इस वास्ते चतुर वैद्यको अच्छी तरहसे 'अरिष्ट' देखकर इलाज करना चाहिये। सुश्रुतने कहा है:—

एतान्यारिष्टरूपाणि, सम्यग् बुद्धेत भिषक्।
साध्यासाध्यपरीक्षायां स राज्ञः संमतो भवेत्॥

जो वैद्य इन अरिष्ट-लक्षणोंको अच्छी तरह जानता है और साध्यासाध्यकी परीक्षा करनेमें निपुण है, वह राजाओंके योग्य होता है।

अरिष्ट-चिह्नोंके पहचाननेका अभ्यास करनेसे रोगीकी आयुका हाल वैद्य फ़ौरन जान जाता है। इसलिये वैद्य इनका अभ्यास करे और आयु-परीक्षाके लिये इनसे चिकित्सामें अवश्य काम ले।

(१३) अगर चिकित्सामें विशेष सफलताकी इच्छा रखते हो, तो रोगीके पास जाकर इतनी बातें अवश्य देखो:—

१—रोगीकी आयु अल्प है, मध्यम है या दीर्घ है। अरिष्ट-चिह्नोंसे ही आयुका पता लगता है।

२—अगर आयु शेष हो, तो देखो कि रोगीको कौन रोग है, रोग होनेके कारण क्या हैं? रोगके पूर्ण रूपसे प्रकट होनेके पहले क्या-क्या चिह्न प्रकट हुए थे?

३—रोगके मालूम हो जानेपर, रोगीकी साध्यता और असाध्यताका विचार करो। साथ-ही-साथ यह भी देखो कि, कोई अरिष्ट-चिह्न तो नहीं है। अगर रोग असाध्य हो, अरिष्ट-चिह्न स्पष्ट नज़र आवें, तो रोगीको त्याग दो। अगर रोग साध्य हो, अरिष्ट न हो, तो बुद्धिमानीसे इलाज